INTERNATIONAL MAGAZINE

एको ब्रह्म द्वितीयो नास्ति

ब्रहमु दीसै ब्रहमु सुणीऐ एकु एकु बखाणीऐ।
आतम पसारा करण हारा प्रभ बिनां नहीं जाणीऐ।

आतम मार्ग

जुलाई 2026

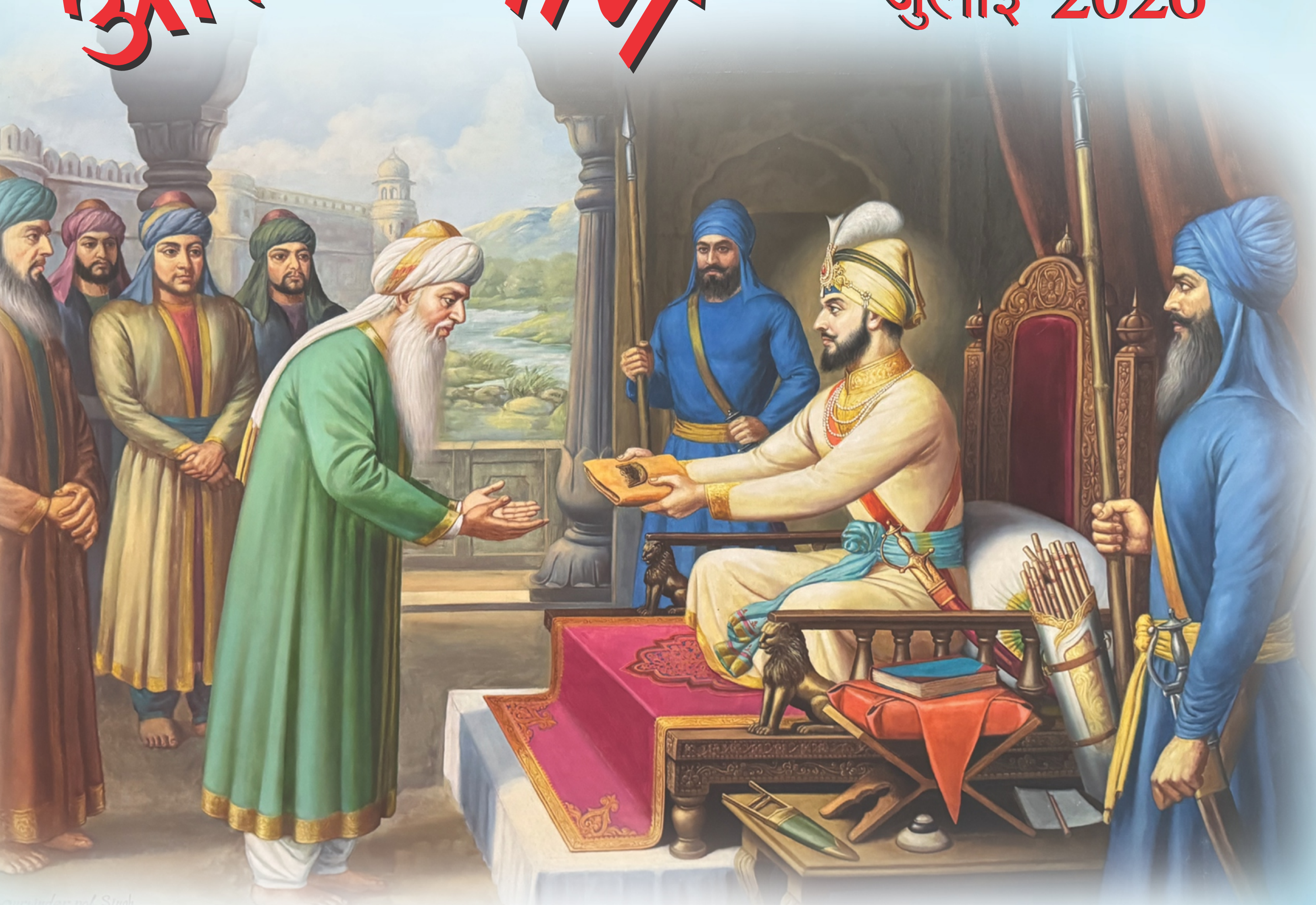

आप जी सयद मुस्लिम होते हुइे भी गुरू-घर के अनिन सेवक थे। भंगानी के युध्द में आप जी के दो पुत्र एक भाई और सैकड़ो मुरीद शहीद हो गए थे। गुरू साहिब जी ने भंगानी की जंग बिजय करने के बाद आप को अपना कंगा केस के समेत बख्शीश किया था।

If Undelivered, Please Return to
Atam Marg Office
Gurdwara Ishar Parkash, Ratwara Sahib
New Chandigarh, P.O. Mullanpur Garibdass,
Teh.Kharar, Distt. S.A.S Nagar (Mohali) - 140901,
Punjab, India,
Tel. +91-94172-14391,79

INTERNATIONAL DIVINE COLLEGE OF EDUCATION

Near Cricket Stadium, New Chandigarh

(Ratwara Sahib)

Admissions open

Limited Seats

Courses

- B.Ed, M.A. Education (Regular)
- Affiliated to: Punjabi University, Patiala

ELIGIBILITY : BA / BSc/ B.Com BBA/B.Tech

New Courses:

- N.T.T (Nursery Teacher Training)
- E.C.C.E.(Early Childhood Care)
- Nany care

ELIGIBILITY : 10th/+2

General Category: 50% marks
Sc/BC/OBC: 45% Marks

- Affordable fee structure
- Hostel Facility
  (Very Nominal Charges)

Contact Us: 95015-14382, 62806-88734 , 99888-11059, 88470-00523

INTERNATIONAL DIVINE SCHOOL
OF NURSING

International Care (International Level of Teaching)

New Chandigarh, Near Cricket Stadium
(Ratwara Sahib)

REGISTRATION OPEN
LIMITED SEATS
2026-2027

GNM COURSE
(3 Year Regular)

PNRC & INC Approved

ELIGIBILITY : 10+2 (Any Stream)
45% Marks for General 40% Marks S.C. / S.T.

AGE : 17 to 35 Years

- English language teaching lecturer specially appointed.
- Hostel Facility (Very Nominal Charges)
- AC Bus Facility Avalaible (Chandigarh, Mohali)

Mail ID : idsn.principal@gmail.com

62802-94356

सरब रोग का अउखदु नामु

सन्त वरियाम सिंघ जी
अनुदित कर्ता – बीबी देविन्दर कौर

ज्यों-ज्यों संसार में कलयुग का प्रभाव बढ़ता जा रहा है, त्यों-त्यों महापुरुषों के मन में भी दया बढ़ती जा रही है, आप चाहते हैं कि इस जलते हुए संसार में, किस प्रकार से ठण्डक पैदा की जाये। ब्रह्मज्ञानी का कथन है, 'ब्रहमगिआनी परउपकार उमाहा।' इसी कार्य हेतु बाबा जी ने यह आरम्भिक दीवान, गाँव घड़ुआं में 20-01-1982 को सजाया।

धारना – कोई नाओं न जाणे मेरा,
गुरू जी सभ तेरी वडिआई ऐ।
तेरी वडिआई ऐ गुरू जी
सभ तेरी वडिआई ऐ।
कोई नाओं ना जाणे मेरा,.........।

तूं विसरहि तां सभु को लागू
चीति आवहि तां सेवा।
अवरु न कोई दूजा सुझै साचे अलख अभेवा॥
चीति आवै तां सदा
दइआला लोगन किआ वेचारे।
बुरा भला कहु किस नो
कहीऐ सगले जीअ तुमारे॥
तेरी टेक तेरा आधारा हाथ देइ तूं राखहि।
जिसु जन ऊपरि तेरी किरपा
तिस कउ बिपु न कोऊ भाखै॥
ओहो सुखु ओहा वडिआई
जो प्रभ जी मनि भाणी।
तूँ दाना तूं सद मिहरवाना नामु मिलै रंगु माणी॥
तुधु आगै अरदासि हमारी जीउ पिंडु सभु तेरा।
कहु नानक सभ तेरी
वडिआई कोई नाउ न जाणै मेरा॥ पृष्ठ – 383

धारना – नाम जपीए तां दूर हुंदे दुखड़े,
सेवा करके मान पाईदा।
मेरे पिआरे, सेवा करके, मान पाईदा।
नाम जपीए तां दूर हुंदे दुखड़े,.........।

साध संगत जी! आप दूर-दूर से दीवान में पहुँचे हो, एक-एक कदम का फल, एक-एक अश्वमेघ यज्ञ के बराबर होता है, जब आप मस्तक नवाते हो, तो दुर्भाग्य में लिखे लेख सौभाग्य में बदल जाते हैं। शबद में बोलने से करोड़ों यज्ञों का फल मिलता है –

कई कोटिक जग फला सुणि गावनहारे राम॥
पृष्ठ – 546

आज जब सारे संसार में हाहाकार मची हुई है महाराज जी ने शीतल जल का सत्संग रूपी स्त्रोत चलाया हुआ है, जिसमें जिज्ञासु गोता लगाकर, शान्ति प्राप्त करते हैं, सत्संग तो केवल सौभाग्य से ही प्राप्त होता है, यह धरती पावन है जिसने नौवें पातशाह गुरू तेग बहादुर साहिब के पवित्र चरणों का स्पर्श प्राप्त करके इसके कण-कण को पवित्र कर दिया।

जब पूरी विधि के साथ सत्संग सुना जाये तो दु:ख दूर हो जाते हैं। दु:ख केवल शारीरिक ही नहीं हुआ करते, मानसिक रोग अधिक हैं, हउमै के रोग कारण तो मनुष्य पैदा होता है और मरता ही रहता है। यदि एक बार मानस देही चली जाये तो फिर दस करोड़ साल छोटी बड़ी यौनियों में घूमता रहता है। बाणी का कथन है –

फिरत फिरत बहुते जुग हारिओ मानस देह लही।
पृष्ठ – 631

कोई दो चार युग नहीं बीते, बहुत युग, चार युगों की उम्र 43 लाख 20 हज़ार साल की होती है। यदि चारों युगों की आयु को जोड़ कर देखें और दस से गुणा कर दें तो 80-90 सौ युग बीत जाते हैं –

इस पउड़ी ते जो नरु चूकै सो आइ जाइ दुखु पाइदा॥
पृष्ठ – 1075

मनुष्य के सामने एक बहुत बड़ा प्रश्न है कि मनुष्य यौनि क्यों प्राप्त हुई? मनुष्य सोचता है कि खा पीकर मौज़ करो, पुन: इस आलम में नहीं आना, यदि मनुष्य सोचता है कि वह दुनियाँ में अमीर बन जाये, जमीन से, जायदाद से या बहुत बड़ी पदवी प्राप्त करके, कोई ऊँची चौधरी का पद मिल जाये, कोई महान कार्य कर दे, ताकि लोग वाह-वाह करते रहें। क्या ज़िन्दगी का यही मकसद है या इससे बढ़ कर भी कुछ और है? यदि केवल यही लक्ष्य है Eat drink and be merry for we shall have to die. ऐश करके, क्या हो जायेगा? साध संगत जी! दुनियाँ में ऐश तो कोई कर ही नहीं सकता, चाहे कितना बड़ा भी क्यों न हो? उसके मन में Tension (तनाव) तथा घबराहट रहती है। कोई भी अपने हृदय में टटोल कर देख लो, अन्दर शान्ति नहीं होती, शान्ति केवल नाम से प्राप्त होती है। सो

परमेश्वर के नाम से शारीरिक तथा मानसिक दुख दोनों ही दूर हो जाते हैं। शारीरिक दुखों की अपेक्षा मानसिक दुख अधिक प्रबल होते हैं। शारीरिक दुख तो दवाईयों से ठीक हो जाते हैं, पर मन के दुखों को ठीक करने के लिये बहुत मेहनत करनी पड़ती है और गुरू की आवश्यकता हुआ करती है।

इसके पश्चात आर्थिक दुख हैं, धन की कमी होती है, सामाजिक दुख हैं, सामाजिक भाईचारे का व्यवहार गलत है, मनुष्य को किसी तरह भी जीने नहीं देता। राजसी दुख हैं, राज पाट में पूरा भाग नहीं मिला। फिर परिश्रम करने वाले वर्ग हैं, घरवाली भी पीछे पड़ी रहती है, पशुओं की देखभाल भी करनी पड़ती है, खेती बाड़ी करते हैं, मज़दूरी करते हैं, लकड़ी आदि का काम करते हैं, दफतरों में जाते हैं अन्य बेअन्त कार्य करते हैं, पर फिर भी तसल्ली नहीं होती। ये आर्थिक दु:ख होते हैं। तुम अपनी मर्जी से मूल्य नहीं लगा सकते किसी भी चीज़ का, राजसी दु:ख हर समय चिपके रहते हैं। ज़रा सी भी गलती हो गई, राजा नाराज़ हो जाता है। किसी कौम पर नाराज़ हो गया, उसे सजा देने लग जाता है, तुम स्वंय ही देख लो; पंजाब को सजा मिली हुई है, वह इसलिये कि यह अनाज बहुत पैदा करता है, शेष राज्यों में इतना अनाज पैदा नहीं होता। यू. पी. में पंजाबियों ने जाकर surplus (फालतू) अनाज पैदा कर दिखाया है, अन्य सभी राज्य के लोग तो खाने वालों में आते हैं, वे कभी भी नहीं चाहेंगे कि तुम्हारी फसल का मूल्य अधिक दिया जाये, तुम जी भर कर खर्च करते हो, सोचते हो कि मेरी गेहूँ की 20 किवन्टल या 30 किवन्टल की, एक एकड़ में पैदावार होगी, कोई गन्ने के बारे में कहता है कि मेरा गन्ना एक एकड़ में 500 किवन्टल हो गया, पर खाने वाले इसे ज़ीरो पर ला देते हैं, क्योंकि पैदा तो करता है पंजाब, खाने वाले और बहुत हैं, ये राजसी दुख हैं कि मनुष्य के अपने पास ताकत न होना और अपनी मेहनत का पूरा फल मिलना, या किसी के साथ नाजायज़ होने लग जाये, महाराज जी ने इन सभी चीज़ों का एक ही इलाज बताया है कि –

सरब रोग का अउखदु नामु॥ पृष्ठ – 274

नाम सभी चीज़ों का इलाज कर देता है, यह बहुत बड़ी व्याखया का मोहताज है कि अर्थ (धन) किस तरह से ठीक हो जाता है, धनी लोगों का, या राजसी लोगों का यह सिद्धान्त है कि हम अमीर बनेंगे, हमारे पास ऐसी योजनाएं हैं कि हम गरीब जनता को अमीरी में ले आयेंगे, कई विदेशी लोग कहते हैं कि हम अर्थ व्यवस्था ठीक कर देगें, पर साध संगत जी! अर्थ व्यवस्था कहीं भी ठीक नहीं होती, नाम जपने से क्या होता है? यदि सभी नाम जपने लग जायें तो लालच दूर हो जाता है, तृष्णा दूर हो जाती है, काम करने के लिये सेवा का जज़बा पैदा होता है, कुछ सोचते हैं कि सेवा तो गुरूद्वारे की हुआ करती है, साध संगत जी! सेवा तो सारे ही संसार की होती है, महाराज जी का फ़रमान है –

इहु जगु सचै की है कोठड़ी
सचे का विचि वासु॥ पृष्ठ – 463

यह सारा संसार वाहिगुरू जी का घर है, इसी के अन्दर ही वह रहता है, इसके अन्दर जहाँ तुम्हारा मन करे, सेवा कर लो, बीमार मनुष्यों की सेवा कर लो, रास्ता खराब है, हर आदमी उस रास्ते में फंसता है या गिरता है, ट्रैक्टर-ट्रालियाँ धस जाती हैं, सेवा करके ऐसे रास्ते साफ कर लो, वृक्ष लगाये हुए हैं, काट-काट कर बकरियों को खिलाये जाते हैं, वृक्षों की रक्षा कर लो, यह भी सेवा है, संसार इतना विशाल है, यह एक क्षेत्र है, जहाँ भी चाहो सेवा कर सकते हो, सभी सेवाएं प्रवान हो जाती हैं।

जब सेवा का जज़बा मन में उठ आया तो फसल पैदा करना भी सेवा है, अन्य काम-धन्धों में भी सेवा हो सकती है पर जो बेरुखी आज पाई जाती है, मज़दूर काम करता है, पर मालिक के मन में यह बात रह जाती है कि यह काम पूरा नहीं करता, जनता के मन में रहता है कि कर्मचारी कार्यालयों में काम पूरा नहीं करते, यदि हम रिश्वत दे देते हैं तो काम जल्दी हो जाता है अन्यथा होता ही नहीं, इसका कारण यह है कि अभी सेवा का ज़ज़बा पैदा नहीं हुआ, जब नाम जपने लग जायेगा, सेवा का ज़ज़बा पैदा हो जायेगा, जब नाम जपेगा, उस समय धन कुर्बान करने की भावना भी पैदा हो जायेगी जब नाम जपने से यह ज्ञान आ जायेगा, तो इसे यह भी पता चल जायेगा कि यहाँ परमेश्वर के सिवाय और कोई है ही नहीं, न है और न ही कोई होगा। जब वह स्वंयमेव ही है, सभी स्थानों पर इसका ही रूप है, जब यह समझ आ जायेगी तो आर्थिक दुख अपने आप ही दूर हो जायेंगे, गुरू के लंगर में प्रसाद बांटने वाले के बारे में कभी नहीं पूछा जाता कि तू कौन है? किस जाति का है? केवल भोजन बांटता है, रात को रहने के लिये जगह मिल जाती है। यह एक छोटा सा अनुभव है, बड़े पैमाने पर लाने के लिये। सभी दुखों का इलाज है परमेश्वर का नाम। दुख चाहे आर्थिक हों, परिवारिक हों, सभी ठीक हो जाते हैं। जब निन्दा, चुगली, वैर विरोध मिट गये, हर व्यक्ति को साथ लेकर चलने की आदत बन जाती है तो भाईचारे के दुख भी समाप्त हो जाते हैं, मन में से लालच समाप्त हो जाते हैं, मनुष्य निष्कपट व्यवहार करता है। सो इसलिये महाराज कहते हैं कि संसार में जितने भी दुख हैं, चाहे मौत का है, चाहे जन्म मरण का है, इन सभी का एक ही इलाज है, वह है नाम –

धारना – तेरे सारिआं दुखां दी है दारू,
इको नाम वाहिगुरू दा।

संसार के सारे दुखों का एक ही इलाज है जैसा कि बाणी का फ़रमान है –

संसारु रोगी नामु दारू मैलु लागै सच बिना॥

पृष्ठ – 687

कई प्रेमियों का विचार है कि यदि मनुष्य शारीरिक तौर पर बीमार है तो नाम कौन से कैपसूल हैं जो ठीक कर देंगे या नाम के अन्दर कोई विटामिन भरे हुए हैं जो खुश कर देंगे? साध संगत जी! यहाँ चण्डीगढ़ में एक इन्सपैक्टर जनरल पुलिस (द्व.द्द.श्च) हुआ करते थे जिनका नाम शमशेर सिंघ था, वे रोहतक के थे, उनका विवाह नारंगवाल हो चुका था। एस. प्रताप की बहन उनकी पत्नी थी और नाम शीला था यह 1956 या 60 का समय था। इस बात को लगभग 20–21 साल हो चुके थे, उसके शरीर को कुष्ठ हो गया। सारे शरीर में से पानी बहने लग गया, बहुत इलाज करवाया, परन्तु किसी भी दवाई का कोई असर न होता। जहाँ–जहाँ भी किसी ने बताया, सभी जगह इलाज करवाया, बाहर विदेश में भी ले गये, जहाँ चमड़ी के रोग दूर होते हैं। अन्त में थकी मांदी वह महिला घर लौट आई। घर में बहुत उदासी तथा एक प्रकार का शोक छाया रहता था, सभी कहते, कि पता नहीं कैसी बिमारी इस शरीर को लगी हुई है? पता नहीं कौन से कर्मों की सजा मिल रही है? यहाँ एक डी. आई. जी हुआ करते थे, उनसे विचार विमर्श किया तो उन्होंने बताया कि यहाँ एक सिंघ है 'सधार' में, जो बहुत बन्दगी करता है। आप खेती किया करते थे, एक बैलों की जोड़ी रखी हुई थी, एक ऊँट था। ऊँट वाला हल वह स्वंय चलाया करते थे। आई. जी. शमशेर सिंघ जी उनके पास चले गये। तब उस बन्दगी करने वाले ने कहा, ''आई. जी. साहिब! तुम्हें मेरे पास नहीं आना चाहिए था, गाँव में तो बेअन्त लड़ाई–झगड़े, फौजदारियाँ होती रहती हैं, लोग मुझे साथ ले जाना चाहा करेंगे, जिसके साथ मैं चला गया, वह तो खुश हो जायेगा, जिसके साथ न गया, वह नाराज़ हो जायेगा। सो आपने यहाँ नहीं आना, आप लुधियाना चलो, मैं आपके पास वहीं आ जाऊँगा।'' सो वह लुधियाना माडल टाऊन में आकर मिले। उन्होंने भाई साहिब को बताया, ''मेरी पत्नी बहुत बीमार है, कोढ़ हो गया है, हमने बहुत इलाज करवा लिया है, कहीं से भी ठीक नहीं होता।'' पहले तो भाई साहिब ने बहुत ही टाल–मटोल की, फिर बोले हमारे पास तो और कोई दवाई है नहीं, केवल नाम की दवाई है, यदि कोई नियम के साथ खाए, वह ठीक हो जाता है। उन्होंने आई. जी. साहिब को कागज पैन लाने के लिये कहा वह बोले लिखो –

1ओंकार सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैर
अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि॥ जपु॥

आदि सचु जुगादि सचु है भी सचु
नानक होसी भी सचु॥ पृष्ठ – 1

उन्होंने मन्त्र पढ़ने की विधि भी बता दी और कहा कि इसे श्रद्धा पूर्वक पढ़ना है, इन चीजों का परहेज़ करना है, घर में अण्डे, मांस तथा शराब का प्रयोग तो क्या घर में रखने ही नहीं हैं, शुद्धता एवं पवित्रता धारण करनी है, सारा परिवार इस स्त्री के निमित जितना अधिक तथा जल्दी पाठ करेगा, यह उतनी ही जल्दी ठीक हो जायेगी। फिर उन्होंने कहा कि मेरे पास कोई आदमी भेज देना, पर सिपाही मत भेजना या मैं स्वंय ही आ जाऊँगा। मुझे सन्देशा भेज देना। कुछ दिन बाद सन्देशा भिजवा दिया। सभी लुधियाना माडल टाऊन आ गये भाई साहिब भी आ गये, वह महिला भी ठीक हो गई, केवल हाथों पर अभी रोग रह गया था। भाई साहिब ने पूछा कि तुमने परहेज़ पूरा किया था। घर में शराब, मांस, अण्डों का प्रयोग तो नहीं किया था, तो परिवार वालों ने उतर दिया, ''जी! घर में शराब, मांस तो नहीं आने दिया पर अण्डे जो शाकाहारी हैं, उनका प्रयोग जरूर किया गया। भाई साहिब ने कहा, ''वे भी छोड़ दो।'' सारे परिवार ने अण्डों का प्रयोग भी बन्द कर दिया। वह महिला ठीक हो गई। पर भाई साहिब ने कहा कि किसी से यह बात मत करना कि वह महिला मैंने ठीक की है। परन्तु धीरे–धीरे पता चल ही गया। साध संगत जी! नाम की दवाई दी, जिससे वह ठीक हो गई, एक नहीं सैकड़ों ठीक हो गये, नाम की दारू से। भाई साहिब भाई रणधीर सिंघ जी बहुत उच्च कोटि के महापुरुष हुए हैं जो कि नारंगवाल के रहने वाले थे, उन्होंने 16 वर्ष जेल में बिताए। साध संगत जी! अब तो जेल बिल्कुल ही जेल नहीं लगती। खाली समय मिले तो चले जाया करो, ताकतवर होकर आओगे, राजसी लोगों को खाने–पीने के लिए मखन, फल, घी, दूध सभी कुछ मिलता है, रहने के लिये बढ़िया स्थान मिलता है। गाँव वालों को तो पता ही नहीं चला। कल जो मेरे साथ बसता सिंघ जी ढोलकी बजा रहे थे, वह भजौडियाँ गाँव के सरपंच हैं, वह काफी दिनों से मिले नहीं। बाद में जब उनसे पूछा कि ''तुम इतने दिन से आये नहीं?'' कहने लगे, ''हम तिहाड़ जेल चले गये थे, तलवन्डी साहिब के पास।'' कहने लगे, ''जेल में तो बहुत ही मौज़ बहार लगी रहती है, पता ही नहीं चला कि हम जेल में हैं – बाहर तो बस ऐसे ही रोटियाँ खाते हैं, वहाँ तो बहुत बढ़िया भोजन मिलता है, रोज परांठे, मक्खन, फल आदि मिलते, कड़ाह प्रसाद की देग आ जाती, सुबह हम आसा जी की वार शुरू कर देते, फिर सूरज प्रकाश की कथा का प्रबन्ध था, हमें घर–बार ही भूल गया।''

कुछ समय पहले जेल ऐसी नहीं हुआ करती थी, बहुत सखती

होती थी, यदि एक बार आदमी जेल चला जाता था, फिर दोबारा कानों को हाथ लगाता था। भाई रणधीर सिंघ जी ने बहुत ही सखत जेल की सजा काटी थी। जब भाई साहिब अभी बालक ही थे उनके पिता जी को जलोधर की बीमारी हो गई, उनके पिता जी जज थे, उन्हें लुधियाना के ष्ट.रूष्ट हस्पताल में लाया गया। डाक्टरों ने कहा कि, ''अब तुम अपने पिता को घर ले जाओ, यह ठीक नहीं हो सकते। एक तो बुखार बहुत तेज़ है, दूसरा पेट में से पानी खत्म नहीं होता, जितना पानी हम बाहर निकालते हैं, उतना फिर भर जाता है।'' तभी सन्त हीरा सिंघ जी वहाँ पहुँच गये जो कि सन्त वरियाम सिंघ जी के ससुराल की तरफ से पिता जी थे। उन्होंने भाई साहिब को कहा कि, ''अपने पिता जी को नाम की दवाई दो। इनके पास बैठकर एक चित होकर, जपुजी साहिब का पाठ करो।'' भाई साहिब पाठ करते-करते इतने लीन हो गये जब 'मंने की गत' पौड़ी पर पहुँचे, उसे ही बार-बार बोलने लगे। जब नेत्र खुले तो क्या देखते हैं कि पिता जी का पेट मटके की तरह हो गया था बिल्कुल कमर के साथ जा लगा। बुखार भी पूरी तरह उतर गया। जब डाक्टर आये तो वे भी देखकर हैरान हो गये, पहले तो उन्होंने पूछा कि तुमने कमरा खाली नहीं किया, जब उनके पिता जी को बिल्कुल ठीक-ठाक देखा तो कहने लगे, ''यह कौन सी करामात हुई है, जिससे आपके पिता जी बिल्कुल ठीक हो गये हैं? हमारी डाक्टरी तो पूरी तरह फेल हो गई।'' भाई रणधीर सिंघ जी ने उतर दिया कि, ''जब सासांरिक दवाईयाँ काम नहीं करतीं, उस समय केवल नाम की दवाई ही काम करती है, विश्वास काम करता है, भरोसा काम करता है -

धारना - तेरे सारिआं दुखां दी है दारू,
इको नाम वाहिगुरू दा।
मेरे पिआरे, इको नाम वाहिगुरू दा।
तेरे सारिआं दुखां दी है दारू,.......।

सभी दुखों का इलाज है - परमेश्वर का नाम, दुख कैसे आता है ?

परमेसर ते भुलिआं विआपनि सभे रोग।
वेमुख होए राम ते लगनि जनम विजोग। पृष्ठ - 135
खसमु विसारि कीए रस भोग।
तां तनि उठि खलोए रोग॥ पृष्ठ - 1256

परमेश्वर को भूलकर रसों में फंस गया, जीभ के स्वादों में पड़ गया, स्वादिष्ट भोजन खाने लग जाता है, भोगों के रसों में पड़कर शरीर को रोगी बना लेता है, मन रोगी हो जाता है। मन के बाद शरीर रोगी हो जाता है, एक उदाहरण नहीं बल्कि अनेक उदाहरण हैं, जो नाम की दवाई से ठीक हुये हैं।

एक ड्राईवर था जो कलकता रहता था, जिसका नाम महेन्द्र सिंघ था, वह 'बुच्चो मण्डी' का रहने वाला था। उसे तीसरी श्रेणी की टी. बी. हो गई। डाक्टरों ने कहा, ''अब तेरी जिन्दगी केवल दस दिन की और रह गई है, तू पंजाब का रहने वाला है।'' उन दिनों टी. बी. का इलाज नहीं होता था आजकल तो उपलब्ध है। डाक्टरों ने आगे कहा, ''तू अपने घर चला जा, ऐसे ही यहाँ पर तेरी लाश पड़ी रहेगी।'' वह गाड़ी में सवार हुआ और जब अम्बाला पहुँचा, वह भाग्यशाली था, वहाँ एक फौजी बैठे थे, उससे पूछा कि, ''यहाँ कोई आस-पास सन्त रहता है?'' उसने जवाब दिया कि दोराहे के पास उतर जाना, वहाँ से राड़ा साहिब चले जाना। वहाँ एक महात्मा रहते हैं। वह बड़े महाराज सन्त ईश़र सिंघ जी के पास चला गया। जब वहाँ पहुँचा तो सन्त महाराज बाहर कुर्सी पर बिराजमान थे, सामने संगत बैठी हुई थी, इसे भी दो मिनट का समय मिल गया। जब सन्त महाराज जी ने पूछा, ''कहाँ से आये हो?'' उतर दिया, ''मैं कलकता से आया हूँ बुच्चे मण्डी का निवासी हूँ, टी. बी. की बिमारी है। डाक्टरों ने कहा है कि मेरी जिन्दगी केवल दस दिन की बाकी है, दो-तीन दिन सफर में बीत गये, अब केवल एक सप्ताह ही रह गया है। मेरी सलाह है कि आपके पास ही यहीं पर प्राण छोड़ दूँ, मेरा अन्तिम संस्कार भी हो जायेगा। मैं अपने घर का पता भी दे देता हूँ।'' सन्त महाराज जी ने वचन किया, ''भाई! गुरू दरबार में मरने नहीं आया करते, यहाँ तो ज़िन्दगी मिलती है, गुरू घर में मौत नहीं मिलती। तुझे पाठ बता देते हैं, मूल मन्त्र का पाठ किया कर, साथ ही शबद भी बता देते हैं। मुँह बान्धकर बर्तन मांजने की सेवा किये जाना।''

''क्योंकि जितने बर्तन मांजेगा, सेवा करेगा, उतनी जल्दी ठीक हो जायेगा। जैसे कि हमने धान बोया है, वर्षा नहीं हुई, धान सूखने लग गया, धरती में दराड़ें पड़ गई। अब यदि एक टयूबवैल का पानी उसमें लगा दें तो दरारें ही नहीं भरेंगी पर यदि पड़ौसी से पानी मांग लें, तो फसल को दो टयूबवैलों का पूरा पानी मिल जाता है और खेत भर जाता है। इसी तरह से यदि दो काम करें, भजन भी और सेवा भी, तो बहुत अच्छा हो जाता है। दो काम करने से दो टयूबवैल, दो हल चल पड़ते हैं, यदि नहर चलती हो तो नहर का पानी भी चलता है, इधर से टयूबवैल भी चलता हो, जल्दी काम खत्म हो जाता है।'' सो सन्त महाराज जी ने कहा कि, ''तू चुस्त होकर सेवा कर, पाठ हर समय करते रहना, भूल मत जाना।'' कहने लगा, ''कोई ऐतराज तो नहीं करेगा?'' सन्त महाराज जी ने वचन किया कि मुँह बान्ध लिया करना। उसे रहने के लिये जगह दे दी, जिस दिन वह आया था, उस दिन कार्तिक की पूर्णमाशी थी। सेवा करता रहा। जब होला-महल्ला

का समय आया तो यह देखा गया कि वही महेन्द्र सिंघ दो शहतीर कन्धों पर रखकर भाग-भाग कर सेवा कर रहा था। किसी प्रेमी ने कहा कि यह आदमी तो बहुत ताकतवर है जो कन्धों पर दो शहतीर उठाकर ले जा रहा है। उस प्रेमी ने छोटे सन्त महाराज जी से कहा, हम इसे चार सेर घी देना चाहते हैं। कहने लगे, ''क्यों?'' वह प्रेमी बोला, देखो! यह आदमी शहतीर ढोने की कितनी बड़ी सेवा कर रहा है? सन्त महाराज जी ने कहा कि, ''हम आपके साथ इसकी बात करवा देते हैं।'' आवाज़ लगा कर बोले, ''महेन्द्र सिंघ! यह शहतीर रख कर ज़रा इधर आना।'' वह शहतीर फैंक कर आ गया। सन्त महाराज जी ने कहा, ''ये प्रेमी तुझे घी देना चाहते हैं।'' भाई महेन्द्र सिंघ बोला कि, ''जी! कल होला महल्ला है, पूर्णमाशी है, कल ये सभी मेरा वचन सुन लें, फिर जो भी देना चाहेंगे दे दें।'' अगले दिन भोग पड़ने के बाद भाई महेन्द्र सिंघ ने जोड़ों के पास खड़े होकर ऊँची आवाज़ में कहा कि, ''साध संगत जी! सभी मेरी बात सुन कर जाना। उसने अपनी बिमारी का सारा हाल बताया कि वह मरने वाला ही था पर किसी अच्छे कर्म के कारण, वह महापुरुषों के पास आ पहुँचा तथा महापुरुषों ने पाठ बताया और सेवा में लगा दिया। जिसका परिणाम यह निकला कि कल जब मैं डाक्टर के पास एक्सरे करवाने गया, तो एक्सरे बिल्कुल ठीक पाया गया तथा मेरी पुरानी एक्सरे देख कर डाक्टर बोला, ''महेन्द्र सिंघ! यह पुरानी एक्सरे तेरी बदल गई है। कलकत्ता में किसी डाक्टर से गलती से अदला बदली हो गई लगती है। तू तो बिल्कुल ठीक है, तेरी छाती में तो एक भी दाग नहीं है, कौन से डाक्टर ने कहा तुझे कि तू टी. बी. का मरीज़ है?''

''यह प्रेमी जो मुझे चार सेर घी देना चाहते हैं, घी तो मैंने क्या लेना, बाकी की ज़िन्दगी मैं केवल नाम जपूंगा और घर वापिस नहीं जाना चाहता। सो साध संगत जी! यह परमेश्वर के नाम का करिश्मा है, कोई एक आधा उदाहरण नहीं, अनेक उदाहरण हैं।''

एक दिन हम राड़ा साहिब आ रहे थे, मेरे साथ हरबंस सिंघ दोआबे वाले भी थे। राड़ा साहिब, एक प्रेमी सन्त भेख में मिल गये। वे हमारे साथ अग्रेजी में बातें करने लग गये। मैंने उसे कहा, ''तू अग्रेजी में क्या बातें किये जा रहा है?'' तो उसने कहा कि, ''मैं एम. ए. पढ़ा हुआ हूँ। मैं आसाम में इन्कम टैक्स आफिसर था। यह बात जो मैं आपको बता रहा हूँ यह राजा साहिब का किस्सा है। मेरा नाम रजिन्द्र कुमार था, मैं रिश्वतें लिया करता था, शराब पीया करता था, बहुत बुरे-बुरे काम किया करता था, उसकी सजा मुझे यह मिली कि मुझे गठिया हो गया, फिर जोधपुर में मेरा इलाज शुरू हुआ। एक दिन मैंने अखबार में पढ़ा कि सन्त महाराज ने एक प्रेत को मनुष्य यौनि दिलवा दी, मैं भी यहाँ (राड़ा साहिब) आ गया। महापुरुषों ने मुझे शबद दिया, वह मैं पढ़ता रहा और ठीक हो गया। फिर मैंने देग करवाई और अरदास की कि मैं पूरी तरह से ठीक हो जाऊं, पर मेरी एक अँगुली ठीक न हुई, सो वैसा ही हुआ। एक अँगुली उसी तरह से टेढ़ी रही।

सो साध संगत जी! यह है -

सरब रोग का अउखदु नामु।
कलिआण रूप मंगल गुण गाम॥ पृष्ठ - 274

पथ्य हो (रहत मर्यादा) रहतें, रखकर भरोसे के साथ मनुष्य काम करे, नाम तो दारू (औषधि) है। महाराज जी कहते हैं कि हम तो नाम की औषधि दरगाह से लेकर आए हैं। नाम हर पक्ष से सहायक होता है, अब हमारे मनों में खयाल उठता है कि नाम कहाँ से मिलता है? गुरू ग्रन्थ साहिब जी से पूछो जो कि हमारे गुरू हैं कि नाम कहाँ से लें? महाराज कहते हैं -

नानक कै घरि केवल नामु॥ पृष्ठ - 1136

हमारे घर तो केवल नाम है, हम न कोई सिद्धि, न कोई जन्त्र-मन्त्र लाए हैं, हम तो केवल नाम लेकर आए हैं क्योंकि संसार रोगी हो चुका है। इसलिये हम सभी दुखों की एक ही दवाई लेकर आए हैं। नाम जपने से दुखों का नाश हो जाता है। सेवा करके मान प्राप्त होता है। साध संगत जी! जन्म-मरण का दु:ख हमारे गले से नहीं उतरता। मानस जन्म हमें प्राप्त हुआ है, अब सारे दुखों से छुटकारा पाकर परम सुखी होने की बारी मिल गई है। परमेश्वर को मिलकर सारे दुखों का खातमा हो जाता है पढ़ो -

धारना - एहो तेरी वारी ऐ, गोबिंद मिलणे की - 2,2
गोबिंद मिलणे की इहो तेरी वारी ऐ।

भई परापति मानुख देहुरीआ।
गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ। पृष्ठ - 12

आप किसान भाई जानते हो, बारी क्या होती है? जब चण्डीगढ़ में नई-नई एक गैस की ऐजन्सी आई तो लोगों को पता चला कि गैस के कनैक्शन मिलने हैं। शहरी लोगों को गैस बहुत प्यारी लगती है क्योंकि इसका न तो कोई धुआं होता है, न कोई और कठिनाई होती है, बस बटन दबाओ और अन्न जल का सारा काम कर लो। कनैक्शन लेने के लिये लोगों ने रात को ही लाईनें लगा लीं। सैक्टर 35 में दो-तीन फर्लांग पर तथा घुमाव देकर लाईनें लग गई। रात को सड़क पर ही सो गये, रोटियाँ भी वहीं पर ही खाईं, दुकानदार ने दुकान भी सुबह 10 बजे की बजाए क्क बजे खोली - भादों का महीना था, लोगों ने छतरियाँ भी वहाँ मँगवा लीं, बस एक ही चिन्ता थी कि लाईन में से बारी न छिन जाये, वैसे तो कुछ लोग पाँच या दस रूपये अधिक देकर भी काम

करवा लेते हैं। हमें मनुष्य का जन्म, सारे दुखों का अन्त करने के लिये जो 83,99,999 यौनियों के बाद बारी में मिला है, जिसका परम मनोरथ प्रभु प्राप्ति है। पर यह हर बार अपनी बारी से हट जाता है। महाराज कहते हैं कि यह मनुष्य एक बार ही मनुष्य नहीं बना, बल्कि करोड़ों बार बन चुका है –

बैर बिरोध काम क्रोध मोह।
झूठ बिकार महा लोभ ध्रोह।
इआहू जुगति बिहाने कई जनम।
नानक राखि लेहु आपन करि करम॥ पृष्ठ – 267

मनुष्य हर बार माया के जाल में फंस कर अपनी बारी को खो बैठता है, इस माया की बाढ़ में फंस जाता है उसमें से निकल नहीं सकता, जब तक गुरू धारण न करे – गुरू धारण किये बिना रास्ता नहीं मिलता और न ही नाम की दात प्राप्त होती है और न ही नाम की साधना कर सकता है। नाम जपे बिना ज्ञान प्राप्त नहीं होता। कर्म, उपासना, ज्ञान, विज्ञान ये चार अवस्थाएं हुआ करती हैं, ये किसी विशेष विधि से ही प्राप्त होती हैं।

यह बात एक उदाहरण से जल्दी समझ में आ जायेगी। एक राजा ने किला बनवाया और उसके चौरासी द्वार रखे। यह किला गोलाकार था, उसमें कोई नेत्रहीन व्यक्ति आ घुसा, उसने चलना शुरू कर दिया, जिधर भी जाता उधर ही दीवार आ जाती, अन्त में रोने लग पड़ा। बार-बार आवाज़ें लगाता है कि कोई सजग नेत्रों वाला मुझे आकर बताए कि मैं कहाँ आ गया हूँ ? मैं यहाँ पर सुबह का फँसा हुआ बैठा हूँ। किसी महापुरुष ने आकर बताया कि, ''तू गोलाकार किले में फंस गया है जिसके अन्दर चौरासी दरवाजें हैं। 83 दरवाजों को तो ताला लगा हुआ है, केवल एक ही खुला हुआ है। इसलिये भाई! तू ऐसे कर दीवार को हाथ लगा ले, जहाँ दरवाज़ा खुला हुआ आये, वहाँ से बाहर निकल जाना।'' इस प्रेमी ने मान लिया और दीवार के साथ-साथ चलना शुरू कर दिया। जब खुला हुआ दरवाज़ा आया, इसे शहद की मक्खी डंक मार गई, वह खुजली करने लग गया और खुला दरवाजा जल्दी में पार कर गया तथा फिर दीवार को जा हाथ लगाया। फिर गिनती शुरू कर दी, पता नहीं चालीसवां द्वार था या साठवां था फिर 120 दरवाजे पार कर गया तो कहने लगा कि, ''देखो! मुझ अन्धे के साथ भी किसी ने मज़ाक किया है, सजग नेत्रों वालों का कर्तव्य होता है कि अन्धे को रास्ता दिखाना और उसके साथ हमदर्दी करना, मेरे नेत्रों में तो ज्योति ही नहीं है, मेरे साथ हमदर्दी दिखाने की बजाए धोखा किया है।'' उसी महापुरुष ने फिर इसकी आवाज़ सुनी और पूछा, ''तू अब फिर क्यों रोने लग पड़ा है ?'' कहने लगा, ''महाराज! आपने तो मेरे साथ मज़ाक किया है।'' महापुरुषों ने कहा कि, ''हमने मखौल नहीं किया – हमने तो तुझे सच्ची बात बताई थी, पर तू यह बता कि तूने कहीं पर भी दीवार से हाथ तो नहीं हटाया था ?'' कहने लगा, ''उठाया था, मैं हाथ हटाकर चलता भी रहा।'' उसने बताया कि उसे मधु मक्खी ने डंक मार दिया था, वहाँ वह सिर को खुजलाने लग पड़ा, हाथ हटा लिया और चलता भी गया। सो महापुरुषों ने समझाया कि अब दीवार से हाथ मत हटाना। इस प्रकार वह खुले हुए दरवाजे तक पहुँच गया और बाहर निकल आया। यह एक दृष्टान्त है, साध संगत जी!

इसी तरह से वाहिगुरू जी ने जो कि करोड़ों ब्रह्मण्डों का मालिक है, 83 लाख 99,999 यौनियों का गोलाकार संसार रचा है – इतने दरवाजे तो बन्द कर दिये और जीव भटकने लग गया –

कई जनम भए कीट पतंगा।
कई जनम गज मीन कुरंगा।
कई जनम पंखी सरप होइओ।
कई जनम हैवर ब्रिख जोइओ।
मिलु जगदीस मिलन की बरीआ।
चिरंकाल इह देह संजरीआ॥ पृष्ठ – 176

कीड़े-मकौड़े, हाथी, हिरन, घोड़े, कुते, बिल्ले, साँप बनता बनता, अब मनुष्य के शरीर में आ पहुँचा, अब खुला द्वार आ गया पर अब इसे विषय विकारों की मक्खी डंक मार गई, गाफल होकर चला जा रहा है, एक दिन, वह समय भी आ जायेगा, जब संसार छोड़कर चला जायेगा, उस समय –

कहु कबीर तब ही नरु जागै।
जम का डंडु मूंड महि लागै॥ पृष्ठ – 870

जब सिर पर डण्डा पड़ता है फिर इस जीव को ध्यान आता है कि समय तो सारा ही बीत गया, अब फिर से इतना लबा चक्कर शुरू हो जायेगा, फिर पैदा होगा, मरेगा फिर जब मनुष्य जन्म की बारी आती है, फिर भूल जाता है।

इसे बार-बार महापुरुष, गुरू, वेद, स्मृतियाँ आदि जगाती हैं, कुरान शरीफ जगा रहा है, बाईबल आवाज़ें लगा-लगा कर जगा रही है, तौरेन्त, अंजीर, जम्बूर, गुरू ग्रन्थ साहिब जी महाराज, अन्य सभी धर्म ग्रन्थ बार-बार मनुष्य को समझा रहे हैं कि तू समझ ले –

भई परापति मानुख देहुरीआ।
गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ।
अवरि काज तेरै कितै न काम।
मिलु साध संगति भजु केवल नाम॥
सरंजामि लागु भवजल तरन कै।
जनमु ब्रिथा जात रंगि माइआ कै॥ पृष्ठ – १२

जिन कामों में तू फंसा हुआ है, वे किसी काम नहीं आयेगें।

यह देही तो बहुमूल्य है। पिछले वर्ष जर्मनी के डाक्टरों ने इस मनुष्य के शरीर का मूल्य बताया, अकेले दिमाग का 72 खरब रूपये मूल्य लगाया है, हिन्दुस्तान के पास इतना पैसा नहीं, जितना बाकी चीज़ों का मूल्य देखने वाली शक्ति का मूल्य, सुनने वाली श्रवण शक्ति का मूल्य, अकेले-अकेले सांस का कोई मूल्य नहीं है, शरीर में जो आत्मा है, ज्योति है यह शरीर बहुत ही बहुमूल्य है, पर जीव गाफ़ल हो जाता है। स्वर्गों में बैठे देवता भी इस देही की लालसा करते हैं। बाणी का फ़रमान है -

गुर सेवा ते भगति कमाई।
तब इह मानस देही पाई।
इस देही कउ सिमरहि देव।
सो देही भजु हरि की सेव॥ पृष्ठ - 1159

धारना - जिहड़ी देही नूँ लोचदे देवते,
ओहो देही तैनूं मिल गई, पिआरिआ।

फिर प्रश्न उठता है कि तू खा पी क्यों रहा है ? इतना ताकत वर क्यों हो रहा है ? फिर अगला प्रश्न उठता है कि तू केवल खाने-पीने के लिये ही जीवित रह रहा है पर वाहिगुरू जी ने तो मानस देही इसलिये दी है कि जो इसे जन्म मरण का दु:ख चिपटा हुआ है, यौनियों में घूमता फिरता है, मनुष्य बन्दगी करके इससे मुक्त हो जाये ताकि इसे परम सुख की अवस्था प्राप्त हो जाये, वह सुख जो कभी भी नष्ट नहीं होता। महाराज जी का फ़रमान है -

गुर सेवा ते भगति कमाई।
तब इह मानस देही पाई।
इसु देही कउ सिमरहि देव।
सो देही भजु हरि की सेव॥
भजहु गुोबिंद भूलि मत जाहु।
मानस जनम का एही लाहु॥ पृष्ठ - 1159

जब तक बुढ़ापे का रोग नहीं लगता, बुढ़ापे का रोग बहुत बुरा होता है, दवाईयां खाये जाता है, परन्तु आराम नहीं मिलता-

जब लगु जरा रोगु नही आइआ।
जब लगु कालि ग्रसी नही काइआ॥ पृष्ठ - 1427

जब तक कोई मार देने वाली बीमारी न लग जाये जैसे कैंसर हो जाये, मनुष्य को पता चल जाता है कि अब मैं नहीं बच सकता -

जब लगु बिकल भई नही बानी।
भजि लेहि रे मन सारिगपानी॥ पृष्ठ - 714

ऐसा समय आने से पहले जैसे जुबान तोतला बोलने लग जाये उससे पहले कीर्तन में बोलकर जुबान को सफल कर ले, नाम जप ले, परमेश्वर का भजन कर ले -

अब न भजसि भजसि कब भाई।
आवै अंतु न भजिआ जाई।
जो किछु करहि सोई अब सारु।
फिरि पछुताहु न पावहु पारु॥ पृष्ठ - 1159

फिर वह समय हाथ नहीं आयेगा, अपने पल्ले केवल पश्चाताप ही रह जायेगा।

सो मनुष्य को परम सुख प्राप्त करने के लिये यह जीवन मिला है और परम सुख मिलता है -

खोजत खोजत ततु बीचारिओ
दास गोबिंद पराइण।
अबिनासी खेम चाहहि जे नानक
सदा सिमरि नाराइण॥ पृष्ठ - 714

यदि तू ऐसा सुख मांगता है जो कभी समाप्त न हो, पर संसार में कोई भी दुख नहीं माँगता। पर इतिहास में एक उदाहरण है, वह कुन्ती का है जो कि पाण्डवों की माँ थी। वह भजन करने के पश्चात सदा ही दुख माँगती थी। जब कुन्ती से पूछा गया कि तू दुख क्यों माँगती है ? जवाब दिया कि सुख आने पर परमेश्वर भूल जाता है और जीव नरक में चला जाता है जैसा कि फ़रमान है 'तपो राज ते राजो नरक' हम हिन्दुस्तान के चक्रवृति सम्राट हैं, यदि हमें कोई दुख लग जाये तो मेरे बच्चे परमेश्वर को नहीं भूलेंगे, शेष सारा संसार सुख माँगता है परन्तु सुख की खोज का पता नहीं कि सुख है कहाँ ? एक बार एक राजा था उसकी लड़की सरोवर पर स्नान करने गई। स्नान करते समय उसने अपना नौलखा हार, उतार कर रख दिया, उसमें सोने, हीरे, जवाहारात जड़े हुये थे, जब राजकुमारी स्नान कर रही थी, एक चील आई और हार उठाकर ले गई। जब लड़की स्नान करने के बाद अपना हार डालने लगी तो, वहाँ पर हार था ही नहीं। बहुत शोर-शराबा हुआ, पूछ-ताछ शुरू हो गई। राजा ने घोषणा कर दी कि जो हार ढूँढ कर लायेगा उसे बहुत सारा इनाम दिया जायेगा। किसी को भी हार न मिला।

एक दिन एक लकड़हारा, गर्मी से तंग आकर सरोवर के किनारे पर, बैठकर आराम करने लगा। पानी पीया, हाथ मुँह धोए और पसीना सुखाने लग गया। अचानक उसकी नज़र पानी पर जा पड़ी तो क्या देखता है कि एक हार पड़ा हुआ है। लकड़हारे ने सोचा कि अब तो मौज ही मौज हो जायेगी, अब तो मेरी किस्मत बदल जायेगी। बैठे-बैठे ही मन में पता नहीं कितनी योजनाएं बना लीं, अब मैं बड़ा आदमी बन जाउँगा, लाखों रूपये मिल जायेंगे, मैं कोठियां खरीद लूँगा, पशु ढोर आदि खरीद लूँगा, जमीन खरीद लूंगा, अब मैं हार निकाल कर ले आऊँ। एक दम पानी में छलांग लगा दी, हार निकालने की कोशिश की पर हाथ में केवल मिट्टी गारा ही आता। लकड़हारे

ने पानी में कई बार हाथ डाला, परन्तु हार तो हाथ न आया, बस मिट्टी ही हाथ लगती। फिर उसने सोचा कि राजा ने यह भी तो कहा था कि जो हार का अता-पता बतायेगा उसे भी इनाम मिलेगा। जब उसने राजा को जाकर बताया कि हार का पता चल गया है। राजा ने हार ढूँढने के लिये पुलिस के सिपाही भी साथ भेज दिए, गोताखोर साथ भेज दिये। राजा ने उन्हें बहुत अच्छी तरह से समझाया कि जहाँ पर पानी में हार पड़ा हुआ है, वहाँ से उसे निकाल कर लाओ। गोताखोरों ने बहुत कोशिश की, बार-बार मिट्टी ही बाहर निकालते रहे, परन्तु हार हाथ नहीं आता था। सभी बहुत परेशान हुए। इतनी देर में एक महात्मा वहाँ से जा रहे थे। उन्होंने शोर शराबा सुना और पूछा, ''भाई! क्या बात है?'' उन्हें बताया गया कि, ''राजा की लड़की का हार गुम हो गया, पानी में दिखाई तो देता है, पर हाथ नहीं आता।'' महात्मा ने कहा, ''ज़रा पानी को स्थिर हो जाने दो।'' जब पानी स्थिर हो गया तो महात्मा ने देखा कि पानी में तो हार की परछांई पड़ रही है। महात्मा ने राजा से पेड़ की ओर इशारा करते हुए कहा कि, ''वह देखो! हार तो ऊपर चील के घौंसले में पड़ा है, इसलिये किसी आदमी को पेड़ पर चढ़ाकर उतरवा लो।'' राजा का आदमी पेड़ पर चढ़कर हार उतार लाया।

साध संगत जी! यह एक दृष्टान्त है। बात यह है कि दुनियाँ सुख की खोज करती है, कोई तो नौकरी चाकरी में सुख ढूँढता फिरता है, कोई व्यापार में सुख की तलाश करते हैं, कोई बच्चों को बहुत पढ़ाने लिखाने को सुख समझता है, कोई प्यार करके सुख चाहता है, कोई खाने पीने में, कोई बर्फ के पहाड़ों पर पहरे देकर सुख की आशा करता है, लेकिन इन चीज़ों से सुख नहीं मिलता। सुख वहाँ से ही मिलता है जहाँ सुख होता है. यदि तू सदीवी सुख प्राप्त करना चाहता है तो राम की शरण में चला जा -

जउ सुख कउ चाहै सदा सरनि राम की लेह।
कहु नानक सुनि रे मना दुरलभ मानुख देह॥

पृष्ठ - 1427

नाम के बिना कहीं भी सुख नहीं मिलता। सारा संसार दुख से पीड़ित हो रहा है पर समझ नहीं सकता कि सुख तो केवल नाम में ही है। नाम ही सुख दे सकता है -

खोजत खोजत ततु बीचारिओ दास गोविंद पराइण।
अबिनासी खेम चाहहि जे
नानक सदा सिमरि नाराइण॥ पृष्ठ - 714

यदि तू केवल नारायण का सिमरण करेगा तो तुझे सुख की प्राप्ति हो जायेगी, मन में धीरज आ जाता है -

धारना - कित बिध मन धीरे जी,
बिन हरि नाम न शांत होइ - 2, 2

सुंदर सेज अनेक सुख रस भोगण पूरे।
ग्रिह सोइन चंदन सुगंध लाइ मोती हीरे।
मन इछे सुख माणदा किछु नाहि विसूरे।
सो प्रभु चिति न आवई विसटा के कीरे।
बिनु हरि नाम न सांति होइ कितु बिधि मनु धीरे॥

पृष्ठ - 707

चाहे दुनियाँ में दौलत के अक्बार क्यों न लगे हों?

गुरू नानक पातशाह जी उड़ीसा में बैठे हैं, वहाँ पर बहुत ही काली घनी अन्धेरी उठी, वृक्षों को गिराती हुई आ रही है। जब मरदाना ने देखा, तो वह घबरा गया और गुरू महाराज जी से कहा कि, ''महाराज! यह आन्धी तो हमें भी उड़ा कर ले जायेगी।'' गुरू साहिब ने कहा, ''मरदाना! तू निरंकार का चाकर है, कुछ नहीं होता, बैठ कर वाहिगुरू-वाहिगुरू किये जा।''

साध संगत जी! मरदाना डर गया। अभी निरभउ वाली अवस्था नहीं आई थी। मुँह को कपड़े से ढक लिया, जब आन्धी समाप्त हो गई, तब मुँह से कपड़ा हटाया तो क्या देखता है कि एक-एक सेर, दो-दो सेर के ओले पड़ने शुरू हो गये। मरदाना कहने लगा, ''आन्धी से तो बच गये पर अब इन ओलों से नहीं बच सकते।'' गुरू महाराज ने कहा, ''मरदाना! डर मत, खड़े होकर लकीर (रेखा) खींच दे।'' मरदाने ने रेखा खींच दी तो ओले उस रेखा के बाहर गिरते जाते हैं, फिर इसके पश्चात बड़ी भयानक आग लग गई, बड़ी-बड़ी ऊँची-ऊँची लपटें उठ रही हैं। मरदाना कहने लगा, ''महाराज! अब तो यह आग हमें नहीं छोड़ेगी।'' गुरू महाराज ने कहा, ''जिसने पहले रक्षा की है, अब भी वही करेगा।'' इसके पश्चात सभी कुछ शान्त हो गया। फिर एक बहुत बड़े कद-काठ वाला नग्न आदमी चला आ रहा है, चेहरा अति डरावना है, जुबान हिल रही है, जब गुरू नानक देव जी के सामने आया तो गुरू नानक देव जी ने पूछा, ''तू कौन है?'' उसने कहा कि, ''मैं इस युग का राजा हूँ, मेरा नाम कलयुग है। आप इस जगत के तारक हैं, मैं आपको डरा रहा था कि मेरी बात (गुलामी) मान ले, पर आप बहुत महान हो मैं आपका कुछ भी न बिगाड़ सका। मैं देखने आया था कि आप इस युग के तारक हो, क्या मुझे देखकर डरोगे तो नहीं?''

निरभउ जपै सगल भउ मिटै॥ पृष्ठ - 293

महाराज जी ने बताया कि जो निरभउ का जाप करता है वह डरता नहीं, तूने क्या देखना है। तेरे युग का कैसा व्यवहार है?'' कलयुग कहने लगा कि, ''मैं इस युग में किसी का धर्म नहीं बचने दूँगा, धर्म के चारों पैर तोड़ दूँगा, किसी का जप पूरा नहीं होने दूँगा, किसी का तप पूरा नहीं होने दूंगा, मेरे राज्य में पाखंड का बोल बाला होगा, लोगों के चरित्र बिगड़ जायेंगे, नशों में

प्रवृत हो जायेंगें, जहाँ–जहाँ परमेश्वर के स्थान होंगे, ठाकुर द्वारे होंगे, वहाँ पर मैं भ्रष्टाचार खड़ा कर दूंगा। सो इस प्रकार मेरे राज्य में पाप ही पाप होगा।'' गुरू नानक जी ने कहा, ''फिर तू इस पाप का फल भोगेगा, तुझे पता है कि निरंकार की दरगाह में हमने भी जवाब देना है –

जिसु सिकदारी तिसहि खुआरी
चाकर केहे डरणा।
जा सिकदारै पवै जंजीरी
ता चाकर हथहु मरणा॥ पृष्ठ – 903

हम निरंकार के चाकर हैं, हमने ही तेरे से जवाब माँगना है तो कलयुग कहने लगा, ''महाराज! मैं इसीलिये आपके पास आया हूँ कि मैं पाप लेकर आया हूँ, आप कलयुग में जन समूह का उद्धार करने आये हो, फिर आप कैसे इनका उद्धार कर दोगे?'' गुरू नानक ने कहा कि, ''हम इतनी शक्तिशाली चीज़ लेकर आए हैं कि जिसका जाप करके मनुष्य तेरे पापों से बच जायेगा – वह है नाम। जो तेरे युग में फल देगा। हम तेरे युग को बुरा नहीं कहते, सबसे अच्छा युग है।''

अभी कलयुग ने कदम ही रखा था। राजा परीक्षित का राज्य था, तब लोगों के विचार बदल चुके थे। कृष्ण महाराज ने पाण्डवों को बताया कि अब कलयुग का समय आ गया है। पाण्डवों ने कहा कि, ''महाराज! क्या सितारे, चाँद, सूरज, हवा बदल जायेंगे?'' कृष्ण महाराज ने कहा कि, ''बताओ, क्या तुहारे पास कोई मुकदमा (केस) है?'' पाण्डवों ने कहा, ''जी है! एक किसान ने जमीन बेची है, जिसने खरीदी है, वह जब उसमें कुआं लगवाने लगा तो उसमें से मोहरों से भरी गागर निकल आई। बेचने वाले ने बोला, ''मैंने तो जमीन बेच दी – खरीदने वाले को जमीन में से चाहे सोना मिल जाये, या कुछ और मिल जाये उस पर उसी का अधिकार है।'' कृष्ण महाराज कहने लगे कि, ''अभी एक–दो महीने फैसला मत करना।'' दो महीने बाद अपने आप ही विपरीत पक्ष में प्रार्थना पत्र आने लगे। जमीन खरीदने वाले ने कहा कि मैंने जमीन खरीदी है – गागर पर भी मेरा ही अधिकार है।'' जमीन बेचने वाले ने प्रार्थना की कि, ''मैंने जमीन बेची है, गागर उसमें दबाकर भूल गया था इस पर मेरा अधिकार है। सो गागर मुझे वापिस दिलवाई जाये।'' कृष्ण महाराज ने कहा, ''हे राजन! अब कलयुग ने कदम रख लिया है, लोगों के विचार बदल गये। चाँद तारे, सूरज कुछ भी नहीं बदला।'' राजा परीक्षित जंगल में गया तो देखता है कि एक बैल को मारा जा रहा है। एकदम पास आया, देखा कि एक आदमी ने काले वस्त्र पहने हुए हैं और बैल को मार रहा है। राजा ने तलवार निकाल ली, पर काले कपड़े वाले ने कहा, ''चाहे मारो या बचाओ, मैं यह बताने आया हूँ कि मैं कलयुग हूँ, इसमें मैंने धर्म के चारों पैर तोड़ दिये – एक पैर राजा का होता है, दूसरा पैर पण्डित का होता है, तीसरा पैर तीर्थ होते हैं और चौथा पैर सत–शास्त्र (साहित्य) होता है। ये चारों ही तोड़ दिये, तीर्थों में मैंने भ्रष्टाचार फैला दिया है, साहित्य मैंने नास्तिक बना देना है, अपवित्र कर देना है, राजा नास्तिक होगा, जो प्रचारक होगा, वह लोगों को तो कहेगा किर ये बातें नहीं करनी परन्तु वह स्वंय किया करेगा। लोगों को उपदेश देगा कि शराब मत पीओ, परन्तु स्वंय चोरी छिपे पीयेगा। हंस कीड़े मकौड़े खायेगा। हंस मोती नहीं चुगेगें।'' राजा परीक्षित ने कहा कि, फिर तो तेरा युग बहुत बुरा है, तुझे मार देना चाहिये।'' कलयुग कहने लगा, ''महाराज! मेरे अन्दर गुण भी हैं।'' पूछा, ''तेरे में क्या गुण हैं?'' उसने कहा कि, ''मेरे बड़े भाई 'सतयुग' में कोई दस हजार साल तपस्या करे, उससे छोटा भाई 'त्रेतायुग' था उसमें कोई एक हज़ार साल तपस्या करे, फिर 'द्वापर युग' में कोई सौ साल तपस्या करे, इस कलयुग में कोई अढ़ाई घड़ी सत्संग कर ले, बराबर हो जाता है। सो कितना बड़ा फल है। इससे बड़ा फल यह है कि जब अन्त समय आने वाला हो अन्तिम श्वांस पर पूरे ध्यान के साथ राम, गोबिन्द, नारायण, अल्लाह, वाहिगुरू कह दे, उसकी उसी समय मुक्ति हो जायेगी, चाहे उसने कितने भी पाप क्यों न किये हों?'' राजा परीक्षित ने कलयुग से कहा, ''तेरे अन्दर तो वास्तव में ही बहुत गुण हैं, आखिरी वक्त पर कोई भूले भटके, एक बार भी नाम जप ले तो उसका कल्याण हो जाता है, यदि ध्यान वाहिगुरू में चला जाये।

हमारे मन में विचार आता है कि क्या किसी की गति हुई है? गवाही गुरू ग्रन्थ साहिब जी देते हैं कि अजामल, गनका की हुई है। सो साध संगत जी! हमने प्रार्थना की थी कि –

सरब रोग का अउखदु नामु।
कलिआण रूप मंगल गुण गाम॥ पृष्ठ – 274

कलयुग में दुख बेअन्त बढ़ गये हैं परन्तु नाम ही सभी का इलाज है, दारू है, औषधि है और कलयुग में नाम जप कर ही छुटकारा मिल सकता है।

मुर्दा होइ मुरीद

मूल विचार : सन्त वरियाम सिंघ जी
लिखती रूप : प्रो. गुरदेव सिंघ

नोट : – 2–5–99 इतवार को महापुरुषों की कोठी के सामने जो दीवान सजाया गया था उसके बारे में शाम को बाबा जी द्वारा अलग–अलग प्रेमियों द्वारा उसके तत्व सार के बारे में निर्णयात्मक जाँच करवाई। बाबा जी द्वारा दीवान के समय किये गये प्रवचन तथा शाम को की गई जाँच–पड़ताल को आधार बनाकर यह लेख लिखा गया है ताकि पाठकों को भी इससे लाभ प्राप्त हो सके।

इस्लाम का प्रभाव अधिक होने के कारण, पंजाब में इसकी वृद्धि, समाज में काफी होती रही। इसमें वृद्धि तीन प्रकार से होती रही, एक तो शरां मौलवियों द्वारा, दूसरा पीरों द्वारा। ये पीर कुछ चालीसे रख कर, कुछ ताकतें हासिल कर लेते थे और लोगों में इनका दब–दबा बन जाता था और फिर ये अपने ढंग से मन मर्जियाँ करवाते थे। इन शरां मौलवियों द्वारा राजसी ढंग से भी प्रभाव डाला जाता था ताकि अधिक से अधिक लोग इस्लाम मत के अनुयायी बन जाएं तथा इस्लाम धर्म को मानने लग जायें तथा इस्लामी संख्या में भी वृद्धि हो जाये। उनका विश्वास है कि खुदा उनसे खुश होगा कि उन्होंने अधिक से अधिक लोगों को शरां के पाबन्द बनाकर बहुत अच्छा काम किया है। यह कार्य मोहम्मद गौरी तथा महमूद गज़नवी के समय से ही चलता आ रहा है और औरंगजेब के समय तक यह अपनी चर्म सीमा पर पहुँच गया।

दूसरी ओर सूफी पीर फकीर थे जो कि प्रेम तथा प्यार से खुदा की बन्दगी करने का उपदेश दिया करते थे और उनके मनों में कोई भेद भाव नहीं था। वे अपने मुरीदों को नियम बद्ध जीवन जीने की प्रेरणा दिया करते थे और नाम जपने की मंजिलों से परिचय करवाया करते थे जैसा कि बाबा जी आम तौर पर दीवानों में इस्लामी परम्परा की सात–वादियों का उल्लेख किया करते हैं। सो इस प्रकार उनके द्वारा भी इस्लाम का प्रचार हो रहा था।

तीसरी श्रेणी के पीर ऐसे थे जो न तो शरां के अनुसार चलते थे, न ही नाम जपने के बारे में या मुक्ति के बारे में कुछ बताते थे बल्कि उनकी अपनी ही मनौतियाँ थीं कि वे चालीसे रख कर शक्तियाँ प्राप्त कर लेते थे और उनके अनुसार फिर लोगों को वरदान या श्राप दिया करते थे। ऐसा ही एक उदाहरण उन दिनों का पंजाब में एक पीर हमज़ागौस का देखा जा सकता है, इसने सियालकोट शहर को गर्क करने के लिये चालीसा रखा हुआ था क्योंकि उसके वरदान द्वारा गीजे खत्री को चार पुत्रों की दात मिली थी, पीर ने कहा था कि एक बेटा मुझे दे देना। परन्तु उसने बेटा देने से इन्कार कर दिया और इस बात पर पीर नाराज़ हो गया और शहर को तहस–नहस करने का इरादा बना लेता है। गुरू नानक पातशाह के पास दुखी लोगों की पुकार पहुँची, आप उस समय भाई लालो के पास, ऐमनाबाद में संगतों का उद्धार कर रहे थे, आप सियालकोट पहुँचे और वहाँ पर एक कब्रिस्तान में, बेरी के वृक्ष के नीचे बैठ गये। उन्होंने भाई मरदाना को भेजा और कहा कि पीर जी को हमारे पास आने के लिये प्रार्थना करके आओ। उसके मुरीदों ने तीन बार भाई मरदाना को यह कह कर वापिस भेज दिया कि पीर का हुक्म है कि उसके मुरकबे (चालीसे) के समय उसे कोई भी मिलने नहीं जा सकता, ऐसा करने से उसका चालीसा का व्रत टूट जायेगा। भाई मरदाना ने गुरू नानक पातशाह जी को बताया कि उसके चेले मिलने नहीं देते। तब पातशाह नानक जी ने फरमाया, ''अच्छा ठीक है। उसकी मर्ज़ी, वह स्वंय ही आ जायेगा।'' आज 25 दिन चालीसा रखे हुये बीत गये थे परन्तु एक दम गुम्बद फट गया और पीर बाहर आकर चेलों को पूछता है कि कोई मिलने आया था? तब उन्होंने बताया कि गुरू नानक पातशाह का चारण भाई मरदाना आया था। पीर ने मुरीदों को ताड़ना दी और कहा कि, ''तुमने बहुत बुरा किया। चलो, अब मैं चलता हूँ उनके पास।'' वहाँ पहुँच कर महाराज जी ने अपने पास बिठाया और समझाया कि, ''पीर जी! आप तो दरवेश हो, एक व्यक्ति की गलती के कारण सारे शहर को सजा देना उचित नहीं है, यह तो वही बात हुई, 'करे गीगा, भरे बीबा' अर्थात 'करे कोई, भरे कोई'।'' पीर को शान्त किया, सब्र, सन्तोष, शुक्र तथा रज़ा का उपदेश दिया।

गुरू अर्जुन देव महाराज जी के समय सरवरिया पीर (लालां वाले) का पंजाब में काफी दब दबा था। जगह–जगह पर उसके मज़ार थे और भाई मन्झ भी बहुत बड़ा इकट्ठ लेकर उनकी मज़ार पर जाया करता था और इलाके का माना हुआ चौधरी था। वह एक दिन एक गुरसिख से मिला और उसके साथ विचार विमर्श किया। उस सिख ने पूछा कि, ''भाई मन्झ! तुझे यहाँ से, इस पीर से कुछ सिद्धि भी मिली है?'' तो भाई मन्झ ने कहा, ''कुछ भी प्राप्ति नहीं हुई और न ही मन को शान्ति मिली है।'' सिख ने कहा, ''भाई मन्झ! तुझे कितने वर्ष हो गये हैं और तूने जीवन के कितने वर्ष ऐसे ही बर्बाद कर दिये हैं और आज तक न तो

तेरा मन ही शान्त हुआ और न ही कोई प्राप्ति हुई है। इसलिये अच्छा यही है कि तू अमृतसर, गुरू अर्जुन देव जी महाराज के चरणों में चल और वहाँ नाम बाणी का उपदेश प्राप्त कर क्योंकि वे पूर्ण सतगुरू हैं, वे तेरे अज्ञान के बन्धन काट देंगे और तुझे इसी जन्म में परम पद की प्राप्ति हो जायेगी, परमात्मा के साथ मिलाप हो जायेगा।''

यह सुनकर भाई मन्झ को कुछ उत्साह सा मिला और मन में धैर्य हुआ, साथ ही साथ मन में अफसोस भी हुआ कि जीवन के इतने कीमती वर्ष गवाँ दिये और अभी तक रूहानी तौर पर कुछ भी प्राप्त नहीं हुआ। यहाँ एक बात विशेष ध्यान देने योग्य है कि भाई मन्झ ने निर्णय लेने में कोई ढील नहीं दिखाई और तुरन्त ही गुरू शरण में जाने का फैसला कर लिया क्योंकि वह पूर्ण तथा उताम श्रेणी का जिज्ञासु था। भाई मन्झ पहले से ही उन शुभ गुणों से भरपूर था जो एक उतम जिज्ञासु में होने चाहिये थे जैसे दया, क्षमा, धीरज, शील, सन्तोष, मीठा बोलना, मन-वचन-कर्म से किसी का बुरा न करने वाला, अहिंसा तथा सहनशीलता के सदगुण, उसमें भरपूर थे। इन्हीं गुणों के कारण उसका परिवार भी आज्ञाकारी था और उसकी रज़ा में चलने वाला था और उसे पता था कि मैं जो भी निर्णय करूंगा, घर में मेरा विरोध नहीं होगा, बल्कि प्रसन्नता पूर्वक सभी मान लेंगे।

भाई मन्झ जब गुरू अर्जुन देव जी महाराज के पास पहुँचता है तो दर्शन करते ही उसके अन्दर एक ऐसी झरनाहट पैदा होती है कि पैर के अंगूठे से लेकर सिर की चोटी तक, मन को शान्त कर देने वाली आध्यात्मिक कम्पन पैदा होती है और उसके मन में गुरू के लिये श्रद्धा और भरोसा बढ़ जाता है। अन्त: मन से बार-बार यही आवाज़ निकलती है कि अब पूरे गुरू के पास पहुँच गया हूँ और इनके पास से नाम की बक्शीश प्राप्त करके ही जाऊँगा। इतनी देर में गुरू महाराज जी ने पूछा, ''भाई! कहाँ से आया है ? तेरा नाम क्या है ?'' उसने अपना परिचय दिया और साथ ही यह भी कहा कि महाराज! मैं पहले सरवरपीर को मानता था और मैंने जीवन का बहुत अधिक भाग ऐसे ही व्यर्थ गवाँ दिया और कुछ भी प्राप्ति नहीं हुई। गुरू महाराज को उसने यह भी बताया कि वह उस इलाके का चौधरी भी है।

यहाँ पर यह बात भी वर्णन योग्य है कि भाई मन्झ ने गुरू जी को अपने दिल की बात साफ-साफ स्पष्ट कर दी और किसी प्रकार का कोई भेद-भाव या छल कपट या पर्दा न रखा। वह जैसा अन्दर से था वैसा ही बाहर से था। गुरू महाराज जी उसकी इस बात से प्रसन्न हुए और कहने लगे कि, ''तुम इलाके के चौधरी हो और यदि तुम सिख बन गये तो तेरा बहुत अधिक विरोध होगा इसलिये अच्छा यही होगा कि तुम सोच लो, घर वालों से जाकर पहले सलाह-मशवरा कर लो। दूसरी बात यह है कि एक तो लोग तुझे भला बुरा कहेंगे, तू सहन कैसे करेगा और यह चौधरीपन तेरी रूहानियत के रास्ते में रुकावट बन सकता है।'' जैसे कबीर साहिब के पास इब्राहिम आदम नामक एक बादशाह मुरीद बनने के लिये आया था, ८ वर्ष मान अपमान से रहित, रहकर कबीर साहिब तथा महापुरुषों की सेवा करता रहा। माता लोई जी ने कबीर साहिब के पास प्रार्थना की कि इसे परम-सत का उपदेश दृढ़ करवा दो। कबीर साहिब ने कहा कि यह अभी अधिकारी नहीं है, इसके अन्दर राज-अभिमान का गर्व और स्मृति अभी शेष रहती है और कबीर साहिब ने माता लोई जी से उसकी परीक्षा लेने को कहा। जब माता लोई ने उसके सिर पर कूड़े कर्कट का टोकरा फैंका तो उसने कहा, ''बलख-बुखारे देखता हूँ।'' गुरू महाराज जी ने भाई मन्झ को कहा कि, ''तू सभी कुछ अच्छी तरह से विचार कर ले।'' कहने लगा, ''महाराज! अभी जो कुछ भी कहोगे, मैं करूंगा बल्कि आपकी आज्ञा सिर माथे पर रखकर मानूँगा।'' महाराज बोले, ''यदि ठीक है तो पहले अपने घर जाओ और जो पीर का मुकाम बनाया है, उसे गिरा कर तब आना। फिर तेरे साथ नाम की चर्चा करेंगे।'' महाराज फिर चेतावनी देते हैं कि देख ले, तेरे ढेर पशु मरने शुरू हो जायेंगे और घर का नुक्सान भी होगा।'' भाई मन्झ कहने लगा, ''महाराज! मुझे सिखी चाहिए, मुझे इसके बदले में यदि अपना शीश भी देना पड़ जाये तो भी मैं तैयार हूँ। मैं अपना तन-मन-धन सभी कुछ आपके अर्पण करना चाहता हूँ, आप कृपा करके मुझे नाम की दात बक्शीश करें।''

महाराज जी ने देख लिया कि वह उतम श्रेणी का जिज्ञासु है और इसके अन्दर दीपक, तेल और बाती, तीनों चीज़ें तैयार हैं केवल बती जगाने का भाव ज्योति जगाने की कमी शेष है। कहने का तात्पर्य है कि भाई मन्झ जिस समय गुरू महाराज जी के पास पहुँचा था वह पूर्ण एवं उताम जिज्ञासु था तभी उन्होंने गुरू दीक्षा प्राप्त करके महान गुरसिख की पदवी प्राप्त की।

इसके पश्चात गुरू महाराज जी उसे नाम की बख्शीश देकर, नाम जपने की युक्तियाँ, आन्तरिक और ब्राह्य रहतों (नियमावलियों) के बारे में बताते हैं फिर यह समझाते हैं कि, ''तू आत्म स्वरूप है और तू पाँच तत्वों का शरीर नहीं है। अन्तसकरण पर चेतन की परछाँई पड़ने के कारण, माया कि बिआधि के कारण, इसमें हिलजुल हुई और यह अपने आपको केवल साढ़े तीन हाथ की देही समझ बैठा। वास्तव में यह आत्म शहज़ादा है और इसके अन्दर उसकी ज्योति परिपूर्ण है। जिस प्रकार पानी की लहरें, पानी से भिन्न नहीं होती और फिर पानी में समा जाती हैं और यदि बर्तन रख दें तो सभी के अन्दर आसमान सीमित में हो जाता

है परन्तु यदि बर्तन तोड़ दिया जाये, तो फिर वही महा आकाश रह जाता है। इसी प्रकार वाहिगुरू घट-घट में व्याप्त है। तेरे अन्दर भी, बाहर भी, जिधर भी नज़र जाती है, सभी कुछ वाहिगुरू ही नज़र आता है फिर वह कोई सुन्न-मुन्न नहीं है, प्यारा है, प्यार करने वाला है और हमेशा तेरे अन्दर अंग-संग रहता है।'' महाराज जी ने बख्शीश कर दी और इसके अन्दर एक दम प्रकाश हो गया जैसा कि फ़रमान है –

गिआन अंजनु गुरि दीआ अगिआन अंधेर बिनासु।
हरि किरपा ते संत भेटिआ नानक मनि परगासु॥

पृष्ठ – 293

आन्तरिक ज्योति लट-लट करके प्रज्जवलित हो उठी, विस्माद में आ गया और समाधि लग गई, सहज समाधि की अवस्था प्राप्त हो गई। काफी समय सेवा सिमरण करते हुये बीत गया। अब गुरू महाराज जी ने कहा, ''भाई मन्झ! जाओ, अब इस नाम की साधना करके, परिवार में रहते हुए, सेवा और सिमरण तथा गुरू की रज़ा में जीवन व्यतीत करो और जब तक हम तुम्हें बुलावा न भेजें, तब तक हमारे पास मत आना।''

गुरू महाराज जी ने देखा कि इसमें श्रद्धा और विश्वास तो भरपूर है, अब क्या यह गुरसिख लाभ, हानि, मान, अपमान दु:ख, सुख को भी सम वृति करके मानता है क्योंकि सोना जब तक ख्ख कैरेट का नहीं बन जाता तब तक उसमें चमक नहीं आती। इसलिये सुनार उसे बार-बार गर्म करता है ताकि इसमें कोई खोट (कमी) न रह जाये।

अब भाई मन्झ, गुरू महाराज जी से आर्शीवाद लेकर जब गाँव लौटता है तो क्या देखता है कि सारे रिश्तेदार, सम्बन्धी तथा सारा गाँव उसकी विरोधता करता है क्योंकि एक तो उसने पीर का मुकाम गिरा दिया था, दूसरा उसने गुरसिखी धारण कर ली थी। पशु मरने शुरू हो गये, खुरली खाली हो गई, गाँव वालों ने पूरी तरह से यह मान लिया कि भाई मन्झ पर लालों वाले पीर का पूरा-पूरा कोप पड़ गया है। वे डर गये कि सारे गाँव, इलाके पर कहीं इस कोप का प्रभाव न पड़े, इसलिये इलाके तथा गाँव वालों ने पंचायत बुलाकर उसे बिरादरी से अलग ही नहीं करवाया बल्कि उसकी जमीन जायदाद पर भी कब्जा कर लिया। गाँव से निकाल दिया और कहा, ''भाई! अब तू कहीं और जगह पर जाकर रह योंकि तेरे कारण पीर नाराज़ हो गया है, तेरे तो सारे पशु मर ही गये हैं, हमारे भी पशु मरने शुरू हो गये हैं, घर में नेक पत्नी तथा आज्ञाकारी सुपुत्री है, सारी बात बताई कि पूरे गाँव में कोई भी हमारा साथ देने वाला नहीं रहा, जिनकी मैं अनेक कामों में सहायता करता रहा, उन्होंने भी मुख फेर लिया है, पर भाई मन्झ ने किसी के पास कोई शिकायत नहीं की बल्कि यह समझ कर प्रवान कर लिया कि मेरे गुरू की यही इच्छा है। आपस में तीनों सदस्यों ने फैसला किया कि अब तो यही अच्छा होगा कि कहीं और जगह जाकर रैन बसेरा बनाया जाये। पत्नी और सुपुत्री ने धीरज बन्धाया और कहा कि यदि गुरू की खुशी इसी में हैं तो हम मिलकर इस परिस्थिति को हंसते-हंसते प्रवान करते हैं।

गाँव से दूर बाहर जाकर छप्पर डालकर रहने लग गये। भाई मन्झ जो कि कई दर्ज़न गाँवों का चौधरी था आज वह अपना खुरपा और तगंड (घास रखने के लिए बोरी का बना थैला) लेकर बाहर से घास लेने जाता है और उसे शहर में बेचकर अन्न पानी का इन्तज़ाम करता है और भाई मन्झ के अन्दर हर समय नाम की धारा (रौ) चलती रहती है और इन प्रतिकूल परिस्थितियों में भी, कभी भी मन में झौरा (पश्चाताप) नहीं करता और मन में ज़रा सा अफसोस नहीं माना, उसके मन में कभी यह बात नहीं आई कि मैं क्या था और अबक्या बन गया? क्योंकि अन्दर से गुरू के प्यार के साथ जुड़ा रहता था।

गुरू महाराज जी भी अन्दर ही अन्दर गुरसिख के सिर पर प्यार भरा हाथ रखे हुए थे और देख रहे थे कि इसकी आत्म स्थिति कैसी है। महाराज जी ने देखा कि इतना कुछ होने के बावजूद भी इसका सिदक एवं भरोसा बरकरार है तो इसके परखने के लिये और कठिन कसौटी लगा दी। एक सिख को हुक्मनामा देकर भाई मन्झ के पास भेजा और साथ ही यह भी कहा कि उसे यह हुक्मनामा, ख रूपये लेने के बाद देना है और कहना कि यह गुरू महाराज जी का हुक्म है। सिख भाई मन्झ के पास पहुँचता है और अपना परिचय देता है कि मुझे गुरू महाराज जी ने आपके पास भेजा है, यह सुनकर वह बहुत प्रसन्न हुआ और बार-बार उस सिख के चरणों में नमस्कार करता है और कहता है कि तू धन्य है जिसने मेरे सतगुरू के दर्शन किए हैं और पूछा कि गुरू महाराज जी ने मेरे लिये क्या हुक्म दिया है। सिख कहने लगा, ''यह हुक्मनामा आपके लिये भेजा है पर इसकी भेंट ख रूपये है और गुरू जी की आज्ञानुसार पहले आप इसकी भेंट दीजिये फिर यह मैं आपको दूँगा।'' कहने लगे ठीक है, आप ठहरो, जल पान कीजिए। अपनी पत्नी से सलाह की कि घर में तो अपने खाने के लिये भी अन्न जल नहीं है अब यह ख रूपये का प्रबन्ध कैसे किया जाये? आपकी पत्नी बहुत समझदार थी, वह बोली जिस सेठानी के घर में काम करती हूँ आप उनसे ख रूपये लेकर मुझे बन्धुआ मज़दूर बना दो। जब तक ये पैसे पूरे नहीं होते, मैं वहीं पर रहकर गुज़ारा करती रहूँगी क्योंकि उस परिवार का आचार व्यवहार बहुत अच्छा है, गुरू की खुशी इसी में ही है कि हम हुक्मनामा ले लें। उन्होंने ऐसा ही किया और गुरसिख वापिस

पहुँच गया और सारा वृतान्त कह सुनाया।

कुछ दिनों के बाद गुरू महाराज जी ने उसी गुरसिख द्वारा, दूसरा हुक्मनामा भिजवा दिया। फिर उसी तरह से हुक्म दिया कि यह हुक्मनामा भी बिना भेंट लिये ख रूपये की, गुरसिख को मत देना। प्रसन्नता पूर्वक गुरसिख की आवाभगत की और लड़की ने जब इतनी बात सुनी, उसने भी पिता को मायूस नहीं होने दिया और खुशी-खुशी कह दिया, ''पिता जी! मुझे भी उसी परिवार में बन्धुआ मज़दूर बना दो और ख रूपये वहाँ से लेकर गुरसिख को दे दो ताकि गुरू आज्ञा पालन में कोई विघ्न न पड़े। ऐसा ही हुआ और गुरसिख को ख रूपये देकर खुशी-खुशी विदा कर दिया और मन में सोचने लगा कि धन्य हैं मेरे सतगुरू जिन्हें मेरा इतना ध्यान है और मेरे जैसे मामूली से सिख को याद कर रहे हैं।

अब गुरसिख की हालत यदि सांसारिक तौर पर देखी जाये तो हृदय द्रवित हो जाता है, घर-बार लुट गया, कुछ भी पल्ले नहीं है, मेहनत-मज़दूरी करके गुज़ारा करना पड़ रहा है, परिवार छिन्न-भिन्न हो गया, पर फिर भी दिल पर कोई ऐसी बात नहीं कर रहा जिससे हृदय को ठेस पहुँचे और उसकी रज़ा में मस्त है तथा सुख दु:ख को सम समझता हुआ गुरू की याद में सेवा और सिमरण करता हुआ किसी प्रकार का शिकवा या शिकायत न करते हुए, दिन व्यतीत कर रहा है और श्वांस-श्वांस गुरू के धन्यवाद में व्यतीत कर रहा है।

गुरसिखी की ऐसी कठिन साधना को देखते हुए, भाई गुरदास जी के ये वचन मन में उठते हैं कि कैसे गुरसिख कठिन साधना करके इन्हें साकार रूप दे रहा है -

मुरदा होइ मुरीदु न गली होवणा।
साबरु सिदकि सहीदु भरम भउ खोवणा।
गोला मुल खरीदु कारे जोवणा।
ना तिसु भूख न नीद न खाणा सोवणा।
पीहणि होइ जदीद पाणी ढोवणा।
पखे दी तागीद पग मलि धोवणा।
सेवक होइ संजीदु न हसणु रोवणा।
दर दरवेस रसीदु पिरम रसु भोवणा।
चंद मुमारखि ईद पुगि खलोवणा।

भाई गुरदास जी, वार 3/18

गुरू महाराज जी ने उस हुक्मनामें में हुक्म दिया था कि, ''भाई मन्झ! हुक्मनामा पढ़ते ही, जो भी कदम उठाए, वह हमारी ओर ही बढ़ना चाहिए चाहे, तू कितना भी जरूरी काम क्यों न कर रहा हो, तुरन्त हमारे पास अमृतसर पहुँच जा।'' भाई मन्झ गुरू दरबार में पहुँच कर महाराज जी को नमस्कार करता है और महाराज जी ने इसकी ओर देखा भी नहीं। भाई मन्झ सेवा में जुट गये।

अब यहाँ पर दो तीन बातें बहुत ही विचारणीय हैं कि पहली तो यह है कि गुरू महाराज जी ने उससे कोई विशेष पूछ-ताछ नहीं की और न ही यह परिवार, घर, जायदाद जमीन के बारे में कुछ पूछा? यदि कोई हमारे जैसा होता तो उसने मन में यह आशा करनी थी कि मुझे गुरू जी शाबाशी देंगे और कहेंगे कि तू घबराया नहीं? यहाँ पर दोनों तरफ अर्थात अन्दर और बाहर एक समान अवस्था है। गुरू महाराज जी सर्वज्ञ हैं पर फिर भी कसौटी पर कसौटी लगाए जा रहे हैं और गुरसिख के मन में कोई शाबाशी या वाह-वाह! की उम्मीद नहीं है बल्कि कुर्बानी ही कुर्बानी है। गुरू के हुकम की पालना किये बगैर, बिनां गिले शिकवे से ही नहीं, बल्कि खुशी-खुशी बिना माथे पर त्यौरियाँ चढ़ाये, किया जा रहा है।

दूसरा त्याग, वैराग तथा नाम सिमरण में गुरसिख परिपक्व हो गया और अब महाराज जी उसे सेवक का पाठ पक्का याद करवा रहे हैं क्योंकि गुरू घर में सेवा और सिमरण दोनों की प्रधानता है। गुरू महाराज जी को नमस्कार करके, भाई मन्झ जी लंगर के श्री मान जी से सेवा के बारे में पूछते हैं। तब श्री मान जी ने कहा कि लंगर में बर्तन मांजना, झाड़ू आदि की सेवा करना और लंगर में लकड़ियों की सेवा किया करो। आप कमर कस कर दिन रात सेवा में लग गये, ऐसा लगा कि सेवा रूप ही बन गये। दिन रात सेवा करते हैं। एक दिन गुरू महाराज जी ने लंगर के श्रीमान जी से पूछा कि एक मन्झ नाम का सिख आया था, वह क्या करता रहता है? उत्तर में प्रार्थना की, ''कि महाराज जी, वह तो अनथक सेवक है, दिन रात सेवा करता है, लंगर में बर्तनों से लेकर झाड़ू लगाने तक, पानी लकड़ियों आदि की सारी सेवा बड़ी शान से निभा रहे हैं।'' गुरू महाराज जी पूछते हैं कि वह भोजन कहाँ से खाता है? श्री मान लांगरी जी ने बताया कि भोजन तो लंगर में से ही करते हैं। महाराज जी ने फ़रमान किया कि फिर सेवा कैसी? वह तो अपनी मज़दूरी ही ले लेते हैं, सेवा तो न हुई? इसलिये हुक्म है कि भोजन लंगर में से न किया करे। यहाँ पर फिर विचार करने वाली बात यह है कि गुरसिखों के लिए गुरू महाराज जी ने गुरसिखों को पूजा का धान खाने से विवर्जित किया है क्योंकि यह नाम जपने वालों के लिये बहुत बड़ी रूकावट है जैसा कि बाबा जी स्वंय वचन किया करते हैं -

धरमसाला दीआं रोटीआं तिंन कंम करेन॥
मत मारन हड्डु गालण भजन करन ना देण॥

और भाई गुरदास जी भी इसके बारे में फ़रमान करते हैं -

इउ धरमसाला दी झाक है विहु खंडू पाजै॥

अब जिस समय भोजन के लिये पंगत बैठ गई, संगतों को

श्री मान जी बर्तन, कटोरियाँ आदि दे रहे होते हैं और जब इनके पास आये तो बिना देखे, वहाँ से आगे बांटने लग गये। इन्होंने भी कुछ नहीं कहा और मन ही मन कहने लगे चलो, आज हाथों पर भोजन लेकर खा लेंगे। फिर जब भोजन बांटने लगा तो इनके पास आए तो इन्होंने भोजन के लिए हाथ आगे बढ़ाया, तो श्री मान जी ने भोजन न दिया और भाई मन्झ से कहा, ''भाई! तेरे लिये गुरू महाराज का हुक्म है कि तुम लंगर में से भोजन मत किया करो।''

प्यारे! यदि ऐसी स्थिति को हम अपने ऊपर घटित करके देखें, तो फिर पता चलता है कि यदि कोई हमें लंगर में से ऐसे उठा दे तो हम कैसे-कैसे भाव प्रकट करेंगे और पता नहीं कैसा भला बुरा कहेंगे? पर धन्य हैं भाई मन्झ जिन्होंने उफ तक न की, वहीं पर ही नमस्कार करके खड़े हो गये। शरीर की परवाह नहीं की, सारा दिन सेवा करते रहे थे पर फिर उसी तरह सेवा में जुट गये, भूखे पेट पड़े रहे, परन्तु सेवा से मुख न मोड़ा बल्कि गुरू का धन्यवाद कर रहे हैं कि गुरू महाराज मुझ जैसे दीन-हीन को याद कर रहे हैं और मेरा ध्यान रखते हैं। इस खुशी को रोम-रोम में समा कर नया-नरोया महसूस कर रहे हैं। समय बीतता गया, अब भाई मन्झ ने दो गट्ठर लकड़ियों के लाने शुरू कर दिये, एक गट्ठर लंगर के लिये और एक बाज़ार में बेचकर कुछ थोड़ा बहुत खा पीकर गुज़ारा कर लेते हैं और ऐसा करते-करते इनका शरीर भी कृशकाय हो गया।

उधर गुरू महाराज सर्वज्ञ सतगुरू, जो कि सारी स्थिति की जानकारी ही नहीं रखते थे बल्कि सिख को परखने के लिये स्वंय ही खेल खेल रहे हैं। अन्त: करण से देख लिया कि अब तक गुरसिख की आत्मिक स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं आया और इसका निश्चय पर्वत की तरह अटल है। एक दिन भाई मन्झ जी लकड़ियों का गट्ठर उठाकर आ रहे थे तो बहुत घनेरी आँधी और तूफान चल पड़ा, कंकड़ पत्थर, मिट्टी, रेत आदि के कण आँखों में गिरे और रास्ता दिखाई देना बन्द हो गया। रास्ते में एक कुआँ था और भाई मन्झ लकड़ियों के गट्ठर सहित धड़ाम से कुएं में गिर पड़े, गले तक पानी था, बड़ी मुश्किल से सम्भल पाये और लकड़ियों के गट्ठर को हाथों से ऊपर उठा लिया ताकि लकड़ियाँ गीली न हो जायें। उधर गुरू महाराज जी अचानक से उठे और कहा, ''भाई! रस्से लेकर मेरे साथ चलो, एक दम नंगें पाँव भागे जा रहे हैं, पीछे-पीछे सेवादार घोड़ा लेकर आ रहा है और एक सेवादार जोड़ा (चरण पादुकाएं) लिये आ रहा है पर किसी को भी मौका ही नहीं दे रहे, बड़ी तेज़ी से चले जा रहे हैं और संगत भी पीछे-पीछे दौड़ी आ रही है और हैरान है कि आज अचानक गुरू महाराज जी को म्या हो गया? किसी का उद्धार करने के लिये और बचाने के लिये इतनी जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाते जा रहे हैं? जंगल में पहुँच कर कुएं से थोड़ी दूर पर खड़े हो गये और कुएं के अन्दर से आवाज़ आ रही है। ''सतनाम वाहिगुरू............'' महाराज जी ने एक सिख को कहा, ''भाई! पूछो अन्दर कौन है?'' पूछा, आवाज़ आई, ''मैं गुरू अर्जुन देव जी महाराज का मामूली सा सिख हूँ। गुरू के लंगर के लिए लकड़ियाँ लेकर आ रहा था, अचानक अन्धेरी आने के कारण मुझे कुछ दिखाई नहीं दिया और इस कुएं में गिर पड़ा।''

यहाँ एक और ध्यान देने वाली बात है कि गुरू महाराज जी कुछ दूरी पर खड़े, भाई मन्झ का जवाब सुन रहे हैं और यह परख रहे हैं कि कहीं अभी भी कोई नाराज़गी, मलाल या हउमैं से भरपूर वचन उसके सुख से तो नहीं निकल रहा, जब कि इस कठिन परिस्थिति में पड़कर, कुछ न कुछ मुख से ऐसे भाव प्रकट होने का भय रहता है कि गुरू महाराज जी का मैंने का बिगाड़ दिया या मुझे सिखी धारण करने का यही फल मिलना था कि पहले मेरा घर उजाड़ा, फिर मेरा परिवार उजाड़ा, फिर मैं गुरू के पास आया तो गुरू ने मेरे साथ प्यार से वचन भी नहीं किये, सेवा में लगा दिया, सेवा करते हुए लंगर में से भोजन खाने की भी मनाही कर दी, मेरा शरीर दुर्बल हो गया, मेरे अन्दर ताकत नहीं रही और अब मुझे कुएं में फैंक दिया आदि-आदि। पर धन्य है गुरसिख भाई मन्झ, फिर भी विनम्रता से भरे वचन कर रहे हैं कि जब बाहर निकालने के लिए रस्सा फैंका तो आपने कहा कि पहले गुरू के लंगर के लिए लकड़ियाँ निकाल लो, मैं बाद में निकल आऊँगा। ऐसा ही किया गया बाद में भाई मन्झ को बाहर निकाला गया तो क्या देखते हैं कि गुरू महाराज जी नंगे पाँव बाहर खड़े हैं, मुझे निकालने के लिये स्वंय आए हैं। मेरे साथ इतना अपनत्व दिखा रहे हैं, यदि चाहते तो किसी सिख को भेज कर मुझे निकलवा सकते थे। उस समय भाई मन्झ रह न सके, उसका प्यार नेत्रों द्वारा आँसुओं के रूप में झर-झर करके बहने लगा और गुरू महाराज जी के चरणों में गिर पड़ा और रो-रो कर चरण धो डाले। बार-बार कह रहा है कि, ''महाराज! मेरे जैसे दीन हीन सिख को कुएं में से निकालने के लिए स्वंय नंगे पाँव चले आए, आपके मन में गुरसिखों के लिए इतना अथाह प्यार है,'' उधर गुरू महाराज जी के नेत्र भी सजल हो रहे हैं और गुरसिख को उठाकर गले से लगा लिया और वचन किया, ''भाई मन्झ! निहाल! निहाल! निहाल! तू धन्य है और धन्य है तेरी सिखी।''

महाराज अति प्रसन्न हुए और बोले -

मंझ प्यारा गुरू नूँ गुरू मंझ प्यारा
मंझ गुरू का बोहिथा जग लंघणहारा।

भाई मन्झ तेरे जीवन से मार्ग दर्शन लेकर हज़ारों, लाखों गुरसिख तर जायेंगे और तेरा जीवन उनके लिये बोहिथा भाव जहाज का काम करेगा जैसे जहाज समुद्र में से हजारों यात्रियों को पार कराता है, इसी तरह तू भी हज़ारों को पार करने के योग्य हो गया है। अब हम तुम्हें प्रसन्न होकर कहते हैं जो कुछ मांगना है, मांग ले, हम तुम्हें गुरू नानक देव जी से दिलवा देंगे। कहने लगा, ''महाराज! कलयुग का समय है तथा अब और अधिक कसौटियाँ मत लगाना। कृपा करके रियायती नम्बर देकर पास कर दिया करना, यही आपके चरणों में मेरी प्रार्थना है।''

महाराज जी कहने लगे, ''भाई मन्झ! यह तो ठीक है पर जब तक सोने को बार-बार तपाया न जाये, खरा सोना ख्ख कैरट वाला नहीं बनता, उसमें खोट (कमी) रह जाया करती है, पूर्ण तौर पर चमक नहीं आया करती। इसी तरह से गुरसिख को भी परख की कसौटी पर कसने से ही वह परम पद तक नहीं पहुँचता है और गुरू की गोद में समा सकता है।''

सो भाई मन्झ का जीवन गुरसिखी के इतिहास में एक आदर्श की तरह है, जिससे मार्ग दर्शन प्राप्त करके हज़ारों और लाखों गुरसिख अपने जीवन का उद्धार कर रहे हैं तथा आने वाले समय में भी अपना उद्धार कर पायेंगे कि किस प्रकार उन्होंने तन, मन, धन अर्पण करके अपनी खुशी कुर्बान कर दी तथा कठिन साधना द्वारा हुक्मानुसार नाम बाणी का प्रचार करके संगतों को सेवा सिमरण में प्रेरित किया। गुरसिखी जीवन का प्रकाश स्तब्भ बनकर आज भी उसी तरह से प्रकाश दे रहे हैं।

हम अपने जीवन की परख स्वंय ही करके देख सकते हैं कि हम कहाँ खड़े हैं? क्या हम ऐसे जीवन के आस पास हैं या कोसों दूर हैं? इनके जीवन से शिक्षा लेकर प्रतीति, भरोसा, दृढ़ता, सुख दु:ख को सम समझने की भावना तथा गुरू की रज़ा में रहना, सेवा त्याग, भावना का पाठ प्राप्त करके गुरू की गोदी में समाने के लिये यत्नशील होते रहें।

ऐसे प्यार भरे वचन करते हुए काफी रात बीच चुकी थी, महापुरुषों ने कहा प्राचीन गुरसिखों की कठिन साधना से प्रेरणा लो। इसी प्रकार अपने जीवन को सेध देते हुए जब आत्म मार्ग का रास्ता तय करोगे तो गुरसिखी जीवन अनुभव प्राप्त करके, परमपद की प्राप्ति कर सकोगे। आपने श्रोताओं का धन्यवाद किया आपने दीवान की समाप्ति के पश्चात अन्तरंग सत्संग का आनन्द लूटा।

श्री 108 सन्त ईश्ऱर सिंघ जी महाराज

ज्ञानी मेहर सिंघ जी

देश कौम से प्यार

सन्त ईश्ऱर सिंघ जी महाराज सदा ही एक रस अमृतमयी कीर्तन तथा उत्त्म ज्ञान, गुरमत ज्ञान, अब्यास साधना का ही उपदेश देते हैं। पर इसका यह अर्थ नहीं कि उन्हें कौम के जीवन से कोई लगाव ही नहीं है। हम पहले बता चुके हैं कि 1947 में उन्होंने बिना किसी अन्य संस्था से सहायता लिये, कौम के लिये अक्षय तथा भारी खर्च करके लंगर जारी रखा। हालांकि प्रत्येक वर्ष की तरह, वह वर्ष कमी वाला था, पर फिर भी 1947-48 में उन्होंने लंगर में लाखों ही प्राणियों को भोजन खिलाया और सन्त किशन सिंघ जी महाराज के अनुसार उस डेढ़ साल में लगभग 10,000 मन गेहूँ तथा मक्की, हजार मन से ज्यादा गुड़ चाय आदि, हज़ारों रूपयों का नमक, मिर्च, मसालों आदि पर खर्च हुआ था। पर फिर भी सन्त जी महाराज ने किसी भी सज्जन से कोई अपील या फिर मांग नहीं की। लंगर हर समय दिन रात चलता था। आगे पीछे कभी भी, किसी समय, शायद भोजन वितरण बन्द हुआ हो, पर उस समय महाराज जी की आज्ञा हर समय ही लंगर जारी रखने की थी ताकि शरणार्थी भूखे तथा जरूरत मन्द लोग किसी भी तरह से दुखी और तंग न हों।

क-म्ब में चीनी हमले ने भारत को एक भारी झटका दिया था, भारत जो कुछ समय पहले यह महसूस करता था कि दुनियाँ में मेरा कोई भी शत्रु नहीं है और हम सांसारिक भाईचारे में पूर्ण सुख एवं शान्ति में रहना पसन्द करते हैं। उसने फौजी बहादुरों को हथियार चलाने से रोक कर, उन्हें मकानों के निमार्ण आदि पर लगा दिया था। उस समय के प्रधान मन्त्री पण्डित जवाहर लाल नेहरू का यह मत था कि फौज एक तरह से देश पर फालतू का बोझ है और इसे जितना भी हो सके कम करना चाहिये, पर चीनीं हमले ने बता दिया कि कमज़ोर भाई की अपेक्षा ताकतवर तथा मक्कार भाई सदा ही घर की नीवें उखाड़ कर अपनी ओर लगा देता है। दोस्ती हमेशा बराबर के ताकतवरों तथा समान विचारों वालों की ही निभ सकती है। कमज़ोर व्यक्ति के साथ, बहादुर व्यक्ति की मित्रता उस पर तरस खाकर, कृपा करके तो शायद बनी रहे, बराबर का साथी समझ कर नहीं हो सकती। सो चीन का यही हाल था। भारत तो एक तरह से पंचशील का उपासक तथा अमन पुत्र बनकर बैठा रहा, पर उधर मक्कारी की सीमा में होशियार चीनी फौजों ने भारत की सीमा पर अचानक ही बर्फीली धरती पर हमला कर दिया। हमारे जवान इस प्रकार की विषम तथा बर्फीली लड़ाई से पूरी तरह अनजान थे। बेचारे ठण्डे कपड़ों में ही लड़ाई में झौंक दिये गये, इस प्रकार देश ने लाखों मीलों का क्षेत्र तथा हज़ारों नवयुवक जो इस युद्ध की धरती तथा ढंग दोनों से ही अनजान थे, देश की आन बचाने हेतु शहीद हो गये। परन्तु जल्दी ही देश होशियार हो गया। जाग्रति की लहर समूचे देश में चली, परन्तु पंजाब के तत्कालीन मुय मन्त्री स. प्रताप सिंघ कैरों ने तो बहादुरी की सीमा ही पार कर दी थी। वह रात दिन देशवासियों से देश के लिये आवश्यक सामान, सोना तथा चाँदी, फिर शस्त्र आदि इकट्ठे करके देश के भण्डार को भरपूर कर रहे थे। जिस दिन उन्होंने पण्डित जवाहर लाल नेहरू को सोने से साथ तोल कर पंजाब की ओर से यह योगदान बशना था, वह दिन पंजाब तथा प्रताप सिंघ का सबसे अधिक रोशन तथा शिखर तक पहुँचने वाला सौभाग्यशाली दिन था। देश के कोने-कोने में पंजाब के मुख्य मन्त्री की चर्चा ही नहीं बल्कि एक तरह से पूजा हो रही थी। उधर चीन का पीकिंग रोडियो पूरे ज़ोर शोर के साथ भारत सरकार से अधिक सरदार प्रताप सिंघ को गालियाँ निकालता था, जिससे समस्त संसार में उस समय स. प्रताप सिंघ का डंका बजता था।

स. प्रताप सिंघ ने पंजाब के उस प्रत्येक कार्य को किया जो देश की जाग्रति के लिये जरूरी था। जब उसने यह सुना कि सन्त ईश्ऱर सिंघ जी महाराज के दीवानों में रोजाना लाखों आदमी पहुँचते हैं तथा हरि कीर्तन तथा हरि सिमरण का आनन्द लूटते हैं तो उसने आप जी के कार्यक्रम की पूर्ति तथा इस कार्य में महापुरुषों को सहयोग प्राप्त करने हित, दर्शन की लालसा प्रकट की। फिर जिस दिन वह हाज़िर हुए, वह एक अजीब सा समय था। सन्त जी महाराज के डेरे में उस समय लंगर बंट रहा था। हज़ारों की संख्या में लोग भोजन खा रहे थे। सरदार प्रताप सिंघ जी ने मुझे पूछा -

''यह लंगर कैसे चलता है, कोई जागीर है ?''

''यह साहिब बाबा बीर सिंघ नौरंगाबाद वालों का लंगर है जो किसी जागीर के बल पर नहीं अपितु निरोल संगतों के प्यार तथा भरोसे पर ही चलता है।''

भोजन खाने के पश्चात सरदार प्रताप सिंघ जी तपोस्थान में सन्त जी महाराज के पास अकेले ही गये तथा 'कोई सेवा बताओ' इसने हाथ जोड़कर प्रार्थना की। सन्त जी महाराज मुस्करा कर कहने लगे, ''सेवा करोगे।'' तो प्रताप सिंघ जी ने कहा, 'कोई

हुम्म करो।' अच्छा फिर रोज़ कोई समय एकान्त में सिमरण करने पर भी लगाया करो, फिर अपने आप ही मन से सत प्रकाश प्रकट होकर हर एक गलती की शोध और सेध मिलती रहेगी, सिमरण केवल एक ही बात की गवाही है कि मन ने कितने सीधे, साफ और उत्त्म कर्म किए हैं, कितने लोगों की सेवा की है, मन, वचन और कर्म के अनुसार कितना ऊँचा चला गया है। सिमरण एक प्रकार से साधन भी है और मन को समझाने का रास्ता भी है। सिमरण करते हुए तुम्हारे सामने आत्मा खड़ी रहती है, फिर वह आत्मा स्वंय ही सर्वव्यापी होकर प्रत्येक मनुष्य के अन्दर चली जाती है। फिर तुम धक्केशाही और अन्याय कर ही नहीं सकते। तुम्हारा राज्य भी राजा जनक जैसा हो जायेगा। यह प्रसिद्ध है कि राजा जनक, एक पैर तेल के कहाड़ पर और दूसरा राज सिहांसन पर रखता था। इसका अर्थ है कि वह हर समय ही मनुष्य मात्र की अन्तरीव पीड़ाएं जो कि तेल के कड़ाह की तरह जलती हैं, अपने सामने रखता था। शारीरिक तौर पर तख्त पर बैठा हुआ भी वह हर समय सर्व व्यापक सांझे, लोक प्रिय तथा लोक दर्द का महरम रहता था। फिर हाथ से माला दी और कहा, ''ले! यह हमारा प्रसाद है। हम इस मानवीय घातक भारत पर हुए हमले को धर्म पर ही संहार समझते हैं। इसलिये वाहिगुरू जी के सामने प्रार्थना है कि वह देश तथा धर्म वालों को इस घोर संकट के समय बल बख्शे ताकि वे देश को अधोगति तथा गिरावट से बचाकर आगे ले जा सके।''

सरदार प्रताप सिंघ जब वहाँ से बाहर निकले तब वह बहुत ही खुश थे क्योंकि उसने एक महान पुरुष से सत-धर्म के एक उतम तथा प्रगतिशील शबद सुने थे। एक दिन खालसा स्कूल करमसर में बे-पनाह इकट्ठ था। लाखों की संगत इन दोनों राजसी तथा धार्मिक सता के अस्तित्व पर पहुँची हुई, पंजाब की महान हस्तियों के दर्शन कर रही थी। अन्त में सन्त जी महाराज ने सिरोपा देने से पहले संगतों को फ़रमान किया कि अब आप सरदार प्रताप सिंघ मुख्य मन्त्री जी से देश, कौम के बारे में बाते सुनेगें।

लाखों की संख्या थी पर कोई भी सेवादर नहीं था। कोई पता तक हिलने की आवाज़ भी नहीं आ रही थी। सन्त जी महाराज के कीर्तन की गूंज, हर प्राणी को गर्वीला बना रही थी। सरदार प्रताप सिंघ जी ने लोगों को देश के लिये कुर्बानी करने के साथ-साथ यह भी कहा, ''आज पहले ही दिन मैंने यह सुना है कि सिमरण इसलिये करना भी जरूरी है क्योंकि उसके द्वारा मन प्रबल और स्वच्छ तथा उत्त्म होकर लोगों को महान सेवा करने के लिये तत्पर हो सकता है। मैं यहाँ से प्रण करके चला हूँ कि प्रतिदिन कुछ न कुछ समय सतगुरू के निमित्त भी लगाया करूँगा और महात्मा जी के हुम्म को मानने का यत्न करूंगा पर आज पहला दिन है जब मैं यह समझने योग्य हो सका हूँ कि वास्तव में धार्मिक महापुरुष ही देश तथा धर्म के असली रखवाले हैं।''

धरती के भाग्य

एक बार सन्त जी महाराज का दिल राड़ा साहिब करमसर से ऊब गया। आप जी के मन में आया, कोई भी परम एकान्त स्थान हो, जहाँ पर बाहर का आवागमन कम हो। परन्तु आन्तरिक बढ़ती हुई सता यह प्रतीक्षा कर रही थी कि होने वाली वृद्धि और विकास कोई स्थान भी ढूँढ ले, तो अच्छा है। एक ही स्थान पर, एक ही समय में बहुत अधिक वृद्धि होना असम्भव है, वह धीरे-धीरे होता ही रहेगा। करमसर का स्थान तो सन्त अतर सिंघ जी महाराज के वरदान के कारण ही फलीभूत हो रहा था। इसी नगर की जूहों (कूलों) को परम सन्त जी महाराज ने कई वर्षों तक लगातार स्वंय आकर हरि कीर्तन से भरपूर किया था। घूमते हुए कभी इधर ढक्की की सैर भी की होगी। कटारी से नहर पार करने के लिये यहाँ पर एक छोटा सा पुल था जो दोनों किनारों को मिलाकर एक करता था। खटड़ियों का पुल यहाँ से काफी दूर था। इसी तरह से जवालाबुआणी का पुल भी काफी दूर था। तो यह जरूरी है कि सन्त अतर सिंघ जी महाराज इसी पुल का प्रयोग करके, इस नहर को कटारी से पार करके, इस तरफ से आते होंगे। यह ठीक है कि हरि कीर्तन करते हुए, हरि सिमरण करते हुए, फिर भाई सन्ता सिंघ जो कि अब सन्त भगवान सिंघ के समय भी उसी तरह से श्री मान की सेवा रेरू साहिब में निभा रहे थे, आपके घर तथा उनके नगर के बाहर मौज में आकर कई लाभदायक एवं उतम वचन करते होंगे। वह अपनी दैनिक क्रिया तथा तप की साधना के अनुसार कई बार, वृक्ष की छायां के नीचे बैठकर अपने प्यारे प्रभु की याद में लीन हो जाते होंगे। प्यार में रंगे हुए मस्त नेत्रों से, चारों ओर देखकर, वाहिगुरू जी की कुदरत में लीन एक रस, अमृत रस के झरने बहते हुए भी यहाँ देखे होंगे, फिर नगर की धरती पर तो समय आने पर, उसी वरदान ने इस करमसर की रचना की हो, ऐसा हो सकता है। फिर इस धरती ने उन्नति के शिखर तक पहुँचना ही था परन्तु अभी और धरती भी जो सन्त जी महाराज की चरण धूलि को स्पर्श पाकर, शान्ति का सन्देश दे सकती थी। सो सन्त जी महाराज अपने अनन्य सेवक बाबू रला सिंघ को साथ लेकर तथा अन्य दो साथियों सहित करमसर से अचानक ही अलोप हो गये तथा अहमदगढ़ से दबलान के लिये रवाना हो गये। दबलान की हालत उस समय बड़ी अजीब थी। नगर के एक ओर हरियाली तथा बहुत ही अच्छी धरती थी परन्तु आगे चलकर कल्लर भूमि शुरू हो जाती थी। यह सारा क्षेत्र आबादी रहित, वीरान था।

गर्मियों के दिनों में धरती में पैर मारने पर कल्लर ही कल्लर दिखाई देता था। उसके आगे पटियाला के पास, जहाँ पटियाला से सड़क बठिंडे को जाती है, वहाँ चार-चुफेरे बंजर जमीन थी। बहुत थोड़ा स्थान ही आबाद तथा अच्छा उपजाऊ था। जहाला नगर, छतामंगणी वाले के डेरे से उदासी अखाड़े की धरती जो कि तरअदद (मेहनत) के बिना बिल्कुल ही वीरान थी। महन्तों के लिये यह बेकार थी और जल्दी से इस धरती को बटाई पर या बट्टे पर लेने के लिये कोई तैयार नहीं था, यह सोचकर कि इसमें से क्या पैदा होगा? सन्त जी महाराज दबलान स्टेशन से उतरकर यहाँ के गुरूद्वारे में गये जो कि बाहर ही था, फिर यहीं से ही इस सारी धरती पर भ्रमण करते रहे। एक तरफ धरती की ऐसी किस्म थी जो रोकती थी कि इस तरफ मुँह मत करो, दूसरी ओर इस धरती के कर्म थे जो हाथ जोड़कर सन्त जी महाराज को प्रार्थना करते थे कि, ''देखो महापुरुष जी! मैं हज़ारों वर्षों से मन्दभागी किसी पावन पुरुष की प्रतीक्षा कर रही हूँ कि कब चरण पखार कर मेरे सोये भाग जागते हैं, करमसर तो साहिब बाबा करम सिंघ जी के नाम से सरोकार है, परम हंस सिमरण में मस्त हुए मतवाले कर्मवान पुरुषों का है। पर यह धरती तो केवल आप जी ने ही पावन करनी है। इसका वरदान और कर्म बख्शीश केवल आप जी ने ही करना है, वरना और कोई साधारण मनुष्य यहाँ पर सफलता प्राप्त नहीं कर सकेगा।''

इस धरती के कुछ और भाग तथा अच्छी ज़मीन का कुछ अंश बाबू रला सिंघ जी गड़वई परम सेवक की अपनी सम्पति थी। यह धरती उन्होंने महापुरुषों को भेंट करने की आज्ञा मांगी। महापुरुष यहाँ पर दोपहर के समय तपोस्थान में वृक्षों के नीचे ही टिके रहे और फिर शाम को कहीं और दूर जाने की बजाए यहीं पर ही छोटा सा स्थान बनाने की आज्ञा दे देते हैं। सो छोटे-मोटे मकान कोठियाँ बनीं, फिर तपोस्थान बना और वह स्थान जहाँ पर केवल सन्त जी महाराज ने केवल एकान्त स्थान ही बनाने हेतु सोचा था जहाँ पर आपका कोई भी और विस्तार करने का इरादा नहीं था, उस धरती का कर्म कि वहाँ पर दीवान स्थान के अतिरिक्त, बीस बड़े कमरे, सन्त महाराज जी का निवास स्थान, दो तपोस्थान और फिर हज़ारों प्रेमियों का दीवान पूर्णमाशी से पहले किया करते थे फिर यहीं से ही पूर्णमाशी के दीवान सजाने, राड़ा साहिब आया करते हैं। वह स्थान जहाँ पर वृक्ष भी भय खाते थे, जहाँ अन्य पैदावार तो एक तरफ घास भी जल जाती थी। केवल कल्लर की घास तथा बूई हुआ करती थी जिससे बान बनती है पर आज इस स्थान पर जो सन्त आश्रम दबलान के नाम से चारों ओर प्रसिद्ध है कि इस आश्रम की धरती पर महापुरुषों की कर्म बख्शीश के कारण गुलज़ार खिली हुई है। संसार भर के उत्त्म फूल सन्त महाराज जी के तपोस्थान के चारों ओर लगे हुए हैं। बाग लगे हुए हैं और वह धरती जिसका बाबू जी को कई बार लगान भी स्वंय देना पड़ता था, आज सैकड़ों मन अनाज लंगर में प्रदान करती है। यह ठीक है कि इस स्थान पर सन्त जी महाराज के सेवकों ने बड़ी कठिन साधना की है। धरती के एक-एक इन्च को कई-कई बार पशुओं के गोबर से भर कर, फिर कई-कई दिनों तक पानी से भरा रख कर और भी अन्य सभी प्रयास जो किसी भी सज्जन ने या सरकार ने बताए, इन सेवकों ने प्रयोग करने से सन्कोच न किया। आज यह धरती सन्त जी महाराज की कृपा से तथा संगतों की सेवा की मुँह बोलती तस्वीर है। जो भी सज्जन आए, वे यह अनुभव नहीं कर सकते कि कभी यहाँ कोई कल्लर या वीरान धरती भी रही होगी। इस स्थान पर सन्त जी महाराज के जाने का एक यह भी प्रताप हुआ कि सरदार प्रताप सिंघ जी के समय ही एक सड़क का सर्वेक्षण किया गया कि पटियाला से नाभा जाने वाली सड़क तथा पटियाला से भटिन्डा जाने वाली सड़क को सुनाम वाली सड़क के साथ मिला दिया जाये। इस सड़क का आस-पास के नगरों को बहुत लाभ हुआ, बेशक यह, इन नगरों के लोगों को बिल्कुल भी महसूस न हो पर सच यह है कि यह सड़क केवल सन्त जी महाराज के आश्रम की बदौलत ही मौजूदा हालत में आई है अन्यथा यह हो नहीं सकता था कि यह लिन्क रोड़ बनकर किसी तरफ से दबलान की ओर बनाई जाती।

साल के पश्चात यहाँ 5 अगस्त के दिन बहुत भारी भण्डारा तथा पहले दिन दीवान सजाये जाते हैं क्योंकि यह सन्त जी महाराज का जन्म दिन है और यह बाबू रला सिंघ जी की इच्छा पूरी हुई है कि इस स्थान पर दीवान सजाया जाता है। हजारों की संख्या में संगत हरि कीर्तन सुनती है और फिर उमड़-उमड़ कर संगतें पहुँचती हैं। यह एक अमर सत्य है कि आज के समय में जितना इकट्ठ सन्त ईश़र सिंघ जी महाराज के दीवानों में हुआ करता था, उसका प्रमाण और कहीं कम ही दिखाई देता है।

उच्च वृतियों में त्याग

आम मनुष्य की यह वृति होती है कि वह एक ही पक्ष का स्वामी होता है। यदि वह कोई उन्नति का विकास का कार्य शुरू कर दे तो उसे उसी ही काम की लगन तथा आकर्षण प्रभावित करती रहती है पर सन्त ईश़र सिंघ जी इसके विपरीत अलग वृति के स्वामी हैं। उनके समक्ष कोई भी विकासशील काम करने के लिये सलाह होती है, वे उस समय पूरे ध्यान से बात सुनते हैं। दिल खोल कर राय देते हैं। उसके साथ सहमति या असहमति भी उसी समय ही प्रकट कर देते हैं। फिर जब वह बातचीत समाप्त हो जाती है, फिर आप कभी भी उस बात को याद नहीं करते। कभी

कोई बातचीत छेड़ दी जाये तो वह अलग चीज़ है। अपनी ओर से कभी भी उसकी चितवना नहीं करते। छोटे सन्त जी महाराज किसी भी कार्य के बारे में फैसला करने के बाद फिर उसमें पूरी लगन के साथ काम करते हैं। मैं समझता हूँ कि सन्त अतर सिंघ जी महाराज ने यह बात छोटे सन्त किशन सिंघ जी महाराज को ठीक ही फ़रमान की थी, ''भाई तू इसके सदा ही साथ रहना, यह साधु है, दुनियाँ की व्यवहारिक बातें बिल्कुल भी नहीं जानता, न ही इसने सारी आयु, ऐसी बुद्धि बनाई है। सो तुम और वह मिलकर ही कार्य की सिद्धि कर सकते हो। बाहरी व्यवहार को सम्भालना, देखना और सारा कार्य करना, यह तेरा उतरदायित्व है।'' वह बात आज तक उसी तरह से ही चलती आ रही है। निर्णय तो मिलकर ही किया जाता है, पर कार्य की निगरानी तथा अन्दर बाहर की सारी जिम्मेवारी सन्त किशन सिंघ जी महाराज पर आ जाती है और वह कार्य करने में, उसे पूरा करने में, समर्थ भी हैं। जरा सा ध्यान से देखें, ढक्की में छोटा सा गुरूद्वारा, लंगर की इमारत भी कोई बहुत बड़ी नहीं थी। पिछले दो कमरे छोड़कर बाकी लम्बी कतार कच्चे कमरों की ही थी। बड़े सन्त जी महाराज का तपोस्थान भी छोटा सा था। फिर तपोवन के बीच में एक छोटा सा छह खुन्जा (कोने) केवल नीचे बिस्तरा बिछाने लायक ही स्थान था। उसमें भी आपके अतिरिक्त अन्य किसी के बैठने की गुजांयश नहीं थी। सारी सर्दियों में सन्त जी महाराज वहीं पर ᒣ फुट के खुन्जों वाले छोटे से टीन तथा फिर लकड़ी की छत के बने हुए छप्पर में निवास किया करते थे। एक तो यह बताने की बात है, असल में इस स्थान में आप केवल ᒣ घंटे ही बिराजते थे। तीन चार घंटे दिन में क्क बजे से दो बजे तक, तीन घंटे यही विश्राम का समय था। इस समय को छोड़कर सन्त जी महाराज आराम करने के लिये और कोई भी समय नहीं निकाला करते थे। वहाँ पर कभी भी प्रसार के बारे में विचार नहीं हुआ करती थी। ढक्की में निवास के दिन भी तपो साधना तथा अब्यास के महान कठिन तथा उत्तम दिन गिने जा सकते हैं।

पर उस स्थान से आने के पश्चात, फिर सन्त जी महाराज ने वही एकान्त धारण कर लिया। पर छोटे सन्त जी महाराज के लिये काम बढ़ गया था। जब डेरा बनना शुरू हुआ तब इसकी, इतना बढ़ जाने की कोई उम्मीद नहीं थी। उस समय लोक रूचियों तथा लोक आशाएं केवल साधन और भक्ति मार्ग तक ही थे। इस स्थान को एकान्त तथा लोगों के चाहने के बावजूद भी, यहाँ तक ही महदूद था कि कुछ सिमरण लगन वाली रूहें तथा सेवा में मस्त सेवक ही यहाँ टिक सकते थे। सेवादारों के लिये सुबह उठकर, उन्हें पाँच से पहले ही अब्यासी तथा संगतों के लिये चाय तथा नाश्ता तैयार करना होता था। सो लांगरी सिंघ भी उस सिमरण की पूरी तरह से हाजिरी में भी उपस्थित समझे जाते थे। उस समय तक खेती की सेवा अभी बहुत कम ही थी। इसलिये बाहर वाले सेवक भी अमृत बेला में उठने से बच नहीं सकते थे। एक बार एक ऐसे महात्मा जी का सेवक यहाँ पर आया जो कस्सी और टोकरी की सेवा अधिक करवाया करते थे परन्तु अमृत बेला में बाहर उठकर बैठने की आदत नहीं थी। यहाँ जो लोग थे सन्त अतर सिंघ जी महाराज के सिखाये हुए थे जो सिमरण तथा साधना के समय अपने साथ कोई लिहाज़ नहीं किया करते थे। रेरू साहिब रात के समय भी तप साधना वाले प्रेमी गोखे की छपरी पर आकर, रात के समय क्क बजे तक बैठते थे। फिर अमृत बेला में दो बजे से फिर यहीं पर जगह साफ करके, प्रेमियों के बैठने के लिये स्थान बना रखे थे, जहाँ पर खुली हवा में आकर सभी सज्जन बैठा करते थे। एक दिन कुछ सत्संग प्रेमियों ने एक बोहड़ वृक्ष की जड़ों के साथ ही आसन लगा दिये। यहीं पर ही सन्त जी महाराज दोनों समय इसे देखा करते थे और हस कर फ़रमान किया, ''भाई! आप डेरे से रज़ाईयाँ भी साथ लेकर आया करो।''

ये सेवक हैरान थे कि महाराज जी क्या कहना चाहते हैं? फिर आगे कहा, ''यह देखो! एक छोटी सी टहनी झुंबी (गुच्छी) भी ख वर्षों से मेरे साथ है। यह हमारे लिए तम्बू है, रजाई है, यही सर्दी से बचाव का साधन है खुले स्थान में इसलिये बैठते हैं कि आलस कम आता है। फिर अब्यासी ने तो अब्यास करना है, सर्दी और आलस दोनों ही उसके पास नहीं आ सकते। तम्हारी रहत-बहत ही यह सिद्ध कर सकती है कि तुम्हें अब्यासी, सिमरण साधन तथा निज दोष को देखने तथा वहाँ से दातें प्राप्त करने की तुम्हारे अन्दर कितनी लगन है? यदि किसी चीज़ की ओर तम्हारा आकर्षण ही नहीं तो हम जबरदस्ती तुम्हारे अन्दर कशिश, आकर्षण, लगाव और लिव कैसे पैदा कर सकते हैं? बड़े साहिब ने तो पूरी तीन चौकड़ियाँ सन्त सिंघ जी के समय, कठिन तप किया है, भाव पूरे फ्म साल ही उसने सिर भी उठा कर नहीं देखा। काले नाले का पानी भी इतना पवित्र हो गया कि बिमारियों से पीड़ित लोग, उस पहाड़ी नाले का पानी, अमृत समझ कर घरों को ले जाते थे, फिर वह नाम औषधि ही थी जिसने लोगों की मानसिक एवं शारीरिक दोनों रोगों को दूर कर दिया। सो भाई! जो तप के समय आराम करना चाहे, उसे हमारे साथ आने का कष्ट नहीं करना चाहिए, बल्कि डेरे पर रहकर सेवा में ही ज़ोर लगाना चाहिए, फिर सेवा हो न सके, साधनों से भय लगे तथा बरोटों की आड़ ढूँढते फिरो, ये साधन तथा तप के बहाने ढूँढने की जरूरत नहीं, यह कोई जोर जबरदस्ती या धक्केशाही का काम थोड़ा है। ये तो लगन और वैराग की

बाते हैं, जिसे न हो, वे आनन्द लूटो, फिर यदि यह कुछ सेवा सिमरण, भजन पाठ हर तरफ से खाली ही रहना है तो साधु की अपेक्षा गृहस्थी सौ गुणा अच्छा है। पर वह काम भी अब तुमसे होना कठिन है क्योंकि धर्मशाला की रोटियाँ तुम कई स्थानों से खा चुके हो, फिर वह काम करके, मेहनत करके, रात को रूखी सूखी, वह भी शायद अब तुम नहीं खा सकते। फिर इस भेष को ही क्यों कलंक लगाना है? भेद-भाव छोड़कर कुर्बानी करो, बरोटियों के सहारे छोड़कर सन्तोष धारण करो, फिर देखो, सिमरण की लहरें तुम्हें किस तरह से रंग देती हैं? तुम्हें किसी के सहारे बैठने की गुलामी नहीं रहेगी बल्कि तुम स्वंय ही छाया रूप बनकर संसार को सुख शान्ति प्रदान करोगे। इस बरोटे को ही देख लो, यह छोटे से एक बीज की ही उपज है या फिर किसी मनुष्य ने इसे किसी बड़े वृक्ष से तोड़कर यहाँ पर लाकर गाढ़ दिया होगा? इसने गर्मियों की सख्त अन्धियों तूफानों, फिर सर्दियों की अनेक ही कड़ाके की ठण्ड, तथा ठण्डी हवायें सहन की होंगी, फिर जाकर कहीं इस योग्य बन सका होगा कि यह हमें दो पल के लिये आराम दे सके और छोटे-मोटे जानवरों के लिए रिहायश भी दे सके, फिर एक वर्ष बाद गोहलों की मेवा भी दे सके, जिसे खाकर जानवर हृष्ट-पुष्ट तथा बलवान तथा बिमारी से बचते हैं। यह महान तपस्वी, बली होकर भी लोगों के लिये आराम तथा सुख देकर लोगों की सेवा करके कोई मज़दूरी नहीं मांगते, पत्थर खाने के बावजूद भी कोई शिकायत नहीं करते। पर हम हैं कि कोई तप साधन करने से पहले ही आराम का सुख साधन ढूँढते फिरते हैं। याद रखो, यदि आराम और धन सहज ही प्राप्त हो जाये जिस कार्य में मेहनत कम फल अधिक है, वह कार्य कभी भी किसी भी समय महान क्लेशों का कारण हो सकता है।

सो यह प्रमाण हर समय ही सन्त ईश़र सिंघ जी महाराज तथा सन्त किशन सिंघ जी महाराज के सामने रहता है। इसीलिये आरम्भ से ही बहुत आडम्बर नहीं करना चाहते थे पर इस धरती के उच्च भाग्य हैं, जिसने लाखों रूपयों की बड़ी-बड़ी इमारतें खड़ी कर दीं। हैरानी की बात यह है कि जिस भी इमारत का सपना या फिर संकल्प, किसी समय चलते-चलते ही बन गया, वह पूर्ण हो जाता है। इस समय तक सौ से अधिक रिहायशी कमरे हैं जिनमें ८ से अधिक कमरों में flush-Latrines तथा हर प्रकार से आधुनिक सुविधाएं इनमें उपलब्ध हैं। फिर सन्त जी महाराज का इनके साथ कोई लगाव नहीं है।

हाई स्कूल जिसकी सारी इमारत आपने तैयार करवाई थी, अब कालिज बनकर सरकार के नियंत्रण में चली गई है। इसी के साथ ही सन्त जी महाराज ने उस समय के प्रबन्ध के लिये लगभग डेढ़ लाख रूपये नकद भी दिये हैं। जब यह इमारत पहली बार देने का फैसला किया गया, उस समय कुछ सेवक, इस मत के थे कि यह सरकार को नहीं देनी चाहिए बल्कि धार्मिक विद्या को सनमुख रखते हुए, अपने पास ही संचालन में रखनी चाहिए। परन्तु बड़े महाराज जी ने स्पष्ट कह दिया, ''छोटे सन्त जी इस बोझ को उठाए फिरते हैं। मैं तो इस कार्य से सदा ही दूर रहता हूँ, पर वे भी रोज़ के झंझटों से तंग है, साधु तो घर से त्याग करके बाहर आया है, फिर यह सैकड़ों घरों की इकट्ठी हुई लड़ाई को सरकार ही सम्भाल सकती है। हमने तो अपने सिर से एक बोझ उतारा है।''

अब गुरूद्वारे की नई इमारत बन रही है, दस लाख से अधिक खर्च हो चुका है, टिकिआं और चमकदार गुम्बद, सुनहरी कलश, गुरू दरबार की शोभा बढ़ा रहे हैं। चिप्स के फर्श पर इटली का संगमरमर लगा है। परन्तु बड़े सन्त जी महाराज को पता नहीं कि क्या हो रहा है? यह सारी जिम्मेवारी सन्त किशन सिंघ महाराज जी की है। गुरमुख माया में उदास रहने की कहावत और कहीं भी इससे उताम नहीं मिलेगी कि दोनों ही सन्त जी महाराज को लाखों की संख्या में आ रही माया कभी भी इस भ्रम में न डाल सकी कि क्या होगा, क्या करना है? यह कार्य कैसे होगा? या इसे समाप्त करने हेतु क्या प्रबन्ध करना पड़ेगा? जब एक बात समाप्त हो जाये कि यह कार्य कैसे होना चाहिए। मैं यह समझता हूँ कि वह कार्य उसी समय ही वास्तव में बन चुका होता है, केवल उसे अन्तिम रूप ही देना शेष रह जाता है, समय कितना ही क्यों न लगे परन्तु कार्य हो जाना चाहिए।

चउथै पहरि सबाह कै
सुरतिआं उपजै चाउ

(अमृत बेला में आसा जी की वार की समाप्ति के उपरान्त किये गये प्रवचन)

सन्त वरियाम सिंघ जी
बानी एवं संचालक वि. गु. रू. मिशन

अमृत बेला से आप हरि यश श्रवण कर रहे हो, सावन का महीना है। आज गर्मी काफी कम हो गई है और ठण्ड के रूप में हमें खुशियाँ दे रही है। आसमान बहुत काले-काले बादलों से भरा हुआ है। चन्द्रमा की चाँदनी, इन बादलों की ओट में छिपकर अलोप हो रही है, जब जब चाँद बादलों में से प्यार के साथ चाँदनी के दर्शन करवाता है तो ऐसे लगता है जैसे बहुत गहरे अपनत्व के साथ आँख मिचौली खेलता हुआ कभी दिखाई दे जाता है, जैसे चन्द्रमा स्वयं ही बड़ी जल्दी-जल्दी अपने ध्येय की ओर, छलागें लगाता हुआ अनन्त राह तथा अनन्त में डुबकी लगाना चाहता है। यहाँ जब कीर्तन शुरू हुआ, शुरू होते ही, साजों की ध्वनि से काली घटाओं ने भी अपना योगदान डालना शुरू कर दिया। ज्यों-ज्यों साजों की आवाज तेज होती है, त्यों-त्यों बादल भी जोर के साथ वर्षा करने लग जाते हैं। बाहर जल ही जल है, बहुत से प्रेमी इस वर्षा में छतरियाँ तथा बरसातियाँ लेकर आने के बावजूद भी कितने गीले हो गये हैं। एक तरफ बैठते जाओ, बहुत ही सुहावना समय बनता जा रहा है। कृपा धारण करके मेघ मूसलाधार वर्षा कर रहे हैं, पपीहे की प्यास बुझ चुकी है और अब उसकी आवाज, पिहु-पिहु की आवाज़ कम ही सुनाई देती है। उसकी प्यास श्वांति बूंद की प्राप्ति है। यदि उसे एक बूँद भी पूरी वर्षा में से मिल जाये तो सारा साल उसकी प्यास बुझी रहती है। धन्य है पपीहा! जिसकी लालसा तो वाहिगुरू जी पूरी कर ही देते हैं परन्तु इसके विपरीत मनुष्य माया के जाल में फंसा हुआ, पाँच चोरों की जन्जीरों में जकड़ा हुआ रोता है, बेचैन रहता है, पर उसे यह पता नहीं कि मेरे अन्दर किस चीज़ की कमी है, जिसके फलस्वरूप मन में शान्ति नहीं आती? वह कौन सी वस्तु है जिसके अनास्तित्व के कारण मेरा कमल फूल उलटा हुआ मुँह नीचे की ओर करके लटक रहा है? वह कौन सा आनन्दमयी किरण है जिसके मिलने से मेरी हर प्रकार की प्यास बुझ जायेगी? अनजान है, मनुष्य! क्योंकि इसे उस बात का ज्ञान ही नहीं, सूझ बूझ नहीं, तुम सभी सत्संग में आते हो, शब्द की गुंजार, साजों-बाजों की मीठी धुनें, आनन्दित करती हुई, किसी वस्तु की ओर ध्यान दिलवाना चाहती हैं जिसके रूपमान होते ही, हमें सभी सुख प्राप्त हो जायेंगे और जन्म जन्मातरों की प्यास बुझ जायेगी। मनुष्य ज़हर का कड़वा घूँट, मीठे में घोल कर पीने की आशा कर रहा है - प्यास के बुझ जाने की। पर इसकी प्यास बुझाने को केवल नाम की अमृत बूँद ही समर्थ रखती है। हउमैं तथा माया की विष, बेहोशी में लथ-पथ कर रही है। आज का हुक्मनामा आप सभी ने बड़े ही ध्यान से श्रवण किया है जिसका आरम्भ -

किआ गुण तेरे सारि सम्हाली मोहि निरगुन के दातारे॥

पृष्ठ - 738

अन्त में यह मांग की गई है जिसे माँगने के लिए यह जीव पूरी तरह से दृढ़ है। यह कह रहा है कि, "हे प्रभु! मैं ढीठ होकर माँग रहा हूँ, मेरे बार-बार माँगने पर आप कोई गिला-शिकवा न करना क्योंकि ढीठ मंगता, तब तक द्वार से नहीं जाता जब तक उसे माँगी हुई वस्तु न मिल जाये। यदि मैं भी ढीठ होकर माँगता हूँ कि वे प्यारे, जो तेरे प्यार में सदा ही लीन रहते हैं, जिन्होंने तुझे रिझा लिया है, उन्हें हम सन्त कहते हैं। उन सन्तों की मैं चरण धूलि माँग रहा हूँ क्योंकि दुनियाँ में इससे पवित्र साकार रूप में कोई भी उतम और पवित्र वस्तु नहीं है। मुझे यह तो पता चल गया है कि तेरे सन्तों की धूलि में शक्ति है जो तेरे नाम तक रुसवाई (पहुँच) करवा देती है। वह है सन्त रेण जिसके प्राप्त हो जाने पर सारे दुखों का हल, तेरी कृपा से अपने आप ही हो जाता है। इस धूलि की महत्त का मुझे कुछ भी पता नहीं था, मैं तो इससे अधिक महत्व जायदाद, ज़मीन कारोबार, नौकरियों अपनी पारिवारिक उन्नति, सुन्दर-सुन्दर कोठियों, सुन्दर सोसायटियों तथा सुन्दर पुरुषों के मेल जोल को ही समझता रहा था। यह मेरी बहुत बड़ी भूल थी क्योंकि तेरे महापुरुषों के पास तूने नाम का प्याला जो अमृत जल से लबा-लब भरा पड़ा है, वह बख्शा हुआ है। उसका यदि एक घूंट भी मिल जाये तो अमरता का जीवन प्राप्त हो जाता है, सभी दुखों का अन्त हो जाता है, मनुष्य जन्म मरण के चक्कर में नहीं आता क्योंकि तेरा ही फ़रमान है-

इहु हरि रसु पावै जनु कोइ।
अंम्रितु पीवै अमरु सो होइ।
उसु पुरख का नाही कदे बिनास।
जा कै मनि प्रगटे गुन तास॥ पृष्ठ - 287

सन्तों के पास तो अनेक दातें हैं पर सबसे कीमती वस्तु उनके पास चरण धूलि है और यहाँ तक आपने फ़रमान किया है कि -

जन पारब्रहम जा की निरमल महिमा
जन के चरन तीरथ कोटि गंगा॥ पृष्ठ - 828

जिन जनों के चरणों की धूलि करोड़ों गंगा तीर्थों से भी उतम है, यदि वह धूलि मस्तक को लग जाये तो पाप 'जनम जनम के हरे कलंगा' की तरह झड़ जाते हैं। हे प्रभु! तेरे सन्तों की चरण धूलि की बख्शीश हो जाये, इस सन्त रेण के फलस्वरूप, करोड़ों अपराध तू हमारे एक पल भर में समाप्त कर देता है तथा अपनी बख्शीश एवं कृपा द्वारा नाम हृदय में बसा देता है, मैं तो एक बहुत ही मामूली सी चीज़ हूँ, जो इतने गुणों को याद भी नहीं रख सकता। हे प्रभु! मेरे पास तो कोई भी वस्तु नहीं है। जब मैं ध्यान करता हूँ तब मुझे पता चलता है कि मेरा विचित्र शरीर, जिसके अन्दर अत्यन्त कीमती वस्तुएं भरी पड़ी हैं और तू स्वंय ही उन कीमती वस्तुओं की रक्षा, अन्दर बसने वाले लुटेरों से, डाकुओं से कर रहा है, तूने ऐसे दरवाज़ें लगा दिये हैं कि वे किसी भी तरीके से खुल नहीं सकते, जैसा कि फ़रमान है -

काइआ नगरु नगर गड़ अंदरि।
साचा वासा पुरि गगनंदरि।
असथिरु थानु सदा निरमाइलु
आपे आपु उपाइदा।
अंदरि कोट छजे हटनाले।
आपे लेवै वसतु समाले।
बजर कपाट जड़े जड़ि जाणै
गुर सबदी खोलाइदा॥ पृष्ठ - 1033

मेरे अन्दर, मेरा तो कुछ भी नहीं है, हे प्रभु! इस दुनियाँ में रिवाज है कि जब किसी को धन की जरूरत पड़ती है तो वह अपनी वस्तुएं दूसरे के पास रख कर, उसका थोड़ा सा मूल्य ले लेता है, उसे अपनी भाषा में गिरवी रखना कहते हैं। गिरवी (Mortgage) रख देते हैं, उस दी गई वस्तु का सम्बन्ध हमारे से नहीं टूटता, जब हमारे अन्दर समर्थ आ जाती है, तो हम पैसे देकर उन चीज़ों को छुड़वा लेते हैं, वे चीज़ें हमारी बन जाती हैं। दूसरी यह रीति है कि हम अपनी पुरानी वस्तुओं के पैसे ले लिया करते हैं, वे खरीदने वाले के नाम हो जाया करती हैं, चाहे कोई जमीन हो, जायदाद हो, कारखाना हो, फिर हमारा उस पर कोई अधिकार नहीं रहता, उसके साथ कोई लगाव नहीं रहता। हे प्रभु! जब मैं विचार करके देखता हूँ तो मुझे पता चलता है कि मैं तो बे-खरीद हूँ, मोल खरीदा हुआ हूँ, मेरा तो कोई अधिकार ही नहीं है, क्योंकि मेरा शरीर जिसे हम बहुत सुन्दर समझते हैं तथा इसमें बसने वाले मन, चित, बुद्धि तथा जीव ये सभी तेरे ही हैं, मेरा तो इसमें कुछ भी नहीं है पर मैं तेरे द्वारा बख्शी गई इस अमूल्य दात को ही अपनी समझता हूँ और तुझे भूल कर, दात को प्यारी समझ कर, उसके साथ प्रीत लगा बैठा हूँ। मेरा स्वभाव सदा-सदा भूलना, गलतियाँ करना और तेरा स्वभाव सदा-सदा क्षमा करना, बख्श देना है। हे प्रभु! तेरा दर्शन इतना मोहित करता है जिसे एक बार हो जाये, उसके सारे दुखों का अन्त हो जाता है। जन्म मरण का चक्कर उसके गले से उतर जाता है, वह सदा सुखी हो जाता है, मैं उस दर्शन पर कुर्बान जाता हूँ। हे प्रभु! तू दाता है, मैं एक साहसहीन और मंगता हूँ, तू सदा ही उपकार करता है क्योंकि तेरा स्वभाव सदा-सदा दयालु है। साध संगत जी! गुरू महाराज फ़रमान करते हैं कि तू उसे याद रख, तुझे सारी खुशियाँ प्राप्त हो जायेगीं। प्रभु जी! तू अगम है, अपार है, मैं तुझ तक पहुँचने के लिये कुछ भी नहीं कर सकता, मेरे अन्दर वे गुण ही नहीं हैं जो तुझे रिझा सकें, मैं तेरी क्या सेवा करूं, किस तरह से तेरे दर्शन पाऊँ, यह मेरे अन्दर बहुत तीव्र लालसा है, क्या कहकर तुझे खुश करूं? और वह कौन सी विधि है जिसे अपनाकर तेरे दर्शन करूँ? तेरा अनुमान कोई भी नहीं कर सकता, तेरा अन्त कोई नहीं पा सकता पर मैं क्या करूँ? मैं उससे भी अधिक तड़पता हूँ, जिसे मैं पपीहा कहता हूँ, जिस पर प्रसन्न होकर तू उसे स्वांति बूंद बख्शता है, मेरी स्वांति बूंद तेरा दर्शन है। इसलिये मैं तुझ से ढीठ होकर माँगता हूँ कि मुझे सन्तों की चरण धूलि दे, जिससे मेरी आशा बढ़ती है कि मैं तेरे दर्शन कर सकता हूँ। हे प्रभु! तू अपने प्यारे को सहारा देकर पार करा देता है।

साध संगत जी! गुरू महाराज जी का हुक्मनामा जो हमें दात मिली है वह इस बात से मिलता-जुलता है -

किआ गुण तेरे सारि सम्हाली
मोहि निरगुन के दातारे।
बैखरीदु किआ करे चतुराई
इहु जीउ पिंडु सभु थारे॥
लाल रंगीले प्रीतम मनमोहन
तेरे दरसन कउ हम बारे॥
प्रभु दाता मोहि दीनु भेखारी
तुम्ह सदा सदा उपकारे।
सो किछु नाही जि मै ते
होवै मेरे ठाकुर अगम अपारे।
किआ सेव कमावउ किआ कहि रीझावउ
बिधि कितु पावउ दरसारे।
मिति नही पाईऐ अंतु न लहीऐ मनु तरसै चरनारे।
पावउ दानु ढीठु होइ मागउ मुखि लागै संत रेनारे।
जन नानक कउ गुरि

किरपा धारी प्रभि हाथ देइ निसतारे।

पृष्ठ – 738

इस शबद में एक लालसा है – दर्शनों की तथा एक रहमत की, जिसे आपने सन्त धूलि कहकर हमारी बुद्धि में लाने का प्रयास किया है। गुरू ग्रन्थ साहिब जी में सन्त धूलि का बहुत महत्व दर्शाया गया है। आप जी एक स्थान पर फ़रमान करते हैं कि सन्त धूलि की हम ही लालसा नहीं करते, इसे देवलोकों के देवता, तीर्थों के देव हैं, वे भी लालसा करते हैं, क्यों लालसा करते हैं क्योंकि इस धूलि में बेअन्त पापों का नाश करने की सता है। इसलिये कि सन्त शरीर में वाहिगुरू जी स्वंय ही साकार रूप में प्रकट होकर विचरते हैं। इस महान पवित्र शरीर के स्पर्श से लाखों पाप तथा अन्तसकरण की मैल जो पापों के कारण बहुत काली गूढ़ी हो गई है, जिसे उतारने का और कोई साधन नहीं है, वह उतर जाया करती है। तीर्थ स्थान पुकार कर रहे हैं कि हे प्रभु! अपने महापुरुषों को भेज, क्योंकि हमारे अन्दर बेअन्त पापी लोग स्नान करते हैं तथा अपने पापों की दुर्गन्ध छोड़ जाते हैं, वे हमें जला रहे हैं, दुखी कर रहे हैं, अकाल पुरुष कृपा करके अपने साधुओं को भेज देता है, फ़रमान है –

गंगा जमुना गोदावरी सरसुती ते करहि उदमु
धूरि साधू की ताई।
किलविख मैलु भरे परे हमरै विचि
हमरी मैलु साधू की धूरि गवाई।
जितने तीरथ देवी थापे
सभि तितने लोचहि धूरि साधू की ताई॥

पृष्ठ – 1263

एक और जगह ऐसा फ़रमान आता है कि प्रभु के प्यारे की धूलि मस्तक पर लगे और सभी आशाएं जो मन में तरंगों के रूप में छलक रही थीं, वे सभी पूरी हो गईं, उन पारब्रह्म परमेश्वर के प्यारों की महिमा निर्मल है। उनके चरण करोड़ गंगा के स्नान से भी अधिक महत्व रखते हैं, जिस पर एक साखी इस प्रकार है।

श्री राम चन्द्र जी महाराज वनवास के दिनों में मध्य प्रदेश में पंचवटी में निवास किये हुए थे। उस समय वहाँ से कुछ एक मील की दूरी पर एक साधुओं ऋषिओं, मुनियों का आश्रम था। वहाँ पर एक बहुत ही प्रतापी महापुरुष हुए थे। वहाँ एक महिला हर समय नाम में इकमिक हुई, जिसका नाम शिवरी था, उसकी जात भीलनी थी, जिसका अन्तसकरण प्रकाश देता था, पूरी तरह से पवित्र थी। उसकी विनम्रता अति उच्च कोटि की थी, सेवा भाव का वह रूप ही बनी हुई थी। महात्मा जानते थे कि यहाँ पर रहने वाले साधु सभी में प्रभु को नहीं देख सके। इनमें अभिमान बहुत है। बख्शीश (वर) तो बहुत कम देते हैं, छोटी-छोटी बातों पर श्राप दे देते हैं। इन्होंने शिवरी से कहा कि इस आश्रम में अभिमानी पुरुष साधु भेष में रहते हैं। हमारे यहाँ से जाने के बाद तुझे परेशानी होगी, तू बेसुध होकर भक्ति करती है, इन्हें इस बात का ज्ञान नहीं है। इन्होंने बेअन्त तप करके रिद्धियाँ-सिद्धियाँ प्राप्त कर ली हैं, जिसके फलस्वरूप इनमें अभिमान बहुत आ गया है। तू इनके आश्रम से थोड़ा सा दूर रहकर भक्ति किया कर। शिवरी अपने गुरू के ब्रह्मलीन होने के पश्चात, उस आश्रम के निकट ही एक झौंपड़ी बनाकर रहने लग गई तथा उसने ऋषिओं-मुनियों की सेवा के लिए, जंगल में से सूखी लकड़ियाँ लाकर, आश्रम में ले जाकर, रात को उन लकड़ियों का गट्ठर रख देती। पहले तो उन साधुओं को पता ही न चला, फिर काफी समय के पश्चात चर्चा चल पड़ी कि यह लकड़ियों का गट्ठर कौन रख जाता है? फैसला किया गया कि रात को पहरा लगाकर देखा जाये। रात को जब आधी रात बीतने के पश्चात, शिवरी लकड़ियों का गट्ठर रखने लगी, उस समय उनके सेवकों ने उसे पकड़ा ही नहीं, अपितु मारा भी और कहा कि तू नीच जाति की है, तू अपने जप-तप लकड़ियों की अग्नि में जला रही है। तुझे चेतावनी देते हैं कि फिर कभी लकड़ियाँ लाकर यहाँ मत रखना।

शिवरी में सेवा भाव कूट-कूट कर भरा था। जब ऋषि अमृत बेला में उठकर पम्पासर तीर्थ जो आश्रम के निकट ही था, वहाँ स्नान करने जाया करते थे। रातें अन्धेरी होने के कारण रोड़े, पत्थर, कांटे, झाड़-झंखाड़ सड़क पर गिर जाया करते थे। वह उनके जागने से पहले ही सारा रास्ता साफ कर दिया करती थी। यह चर्चा भी चल पड़ी कि कौन है जो सारे रास्ते को झाड़-झूड़ कर साफ कर देता है? उन्होंने फिर शिवरी को पकड़ लिया और उसे बहुत मारा पीटा और कहा कि पहले तू हमारा लकड़ियाँ लाकर तप भंग करती थी अब तू रास्ता साफ करके हमारा तप नष्ट करती है। इसी बात पर उन्होंने शिवरी को बहुत मारा। वह वहाँ से अपनी झौंपड़ी छोड़कर ३-४ मील की दूरी पर रहने लग गई और राम भक्ति में सदा लीन रहती। सदा ही उसके मुख से प्रभु का नाम 'हरे राम, हरे राम' निकलता रहता था। उसके नाम में इतनी बरकत थी कि जब वह नाम उच्चारण करती थी तो पन्छी भी उसके पास आकर बैठ जाया करते थे आपस में विरोधी स्वभाव वाले जानवर भी सभी आकर बैठ जाते थे। यहाँ तक कि शेर-हिरन भी इकट्ठे होकर, बेसुध होकर बैठ जाते थे।

उस समय श्री राम चन्द्र जी महाराज ४ कलाएं सम्पूर्ण विष्णु जी के अवतार ने संसार में रूप धारण किया हुआ था। वनवास बिताने के लिये पास ही पंचवटी में निवास किये हुए थे।

इस पम्पासर तीर्थ में अचानक कीड़े पड़ गये जिन्हें कूरे कहा जाता है। पानी गन्दा हो गया, न तो पीने लायक था न ही स्नान

करने लायक था। इन ऋषियों-मुनियों ने बेअन्त मंत्र पढ़-पढ़ कर यज्ञ किये, यज्ञ का जल बार-बार इसमें डालते रहते, परन्तु तीर्थ उसी तरह से उन जीवों से भरा हुआ दूषित ही रहा। अन्त में सभी ने श्री राम चन्द्र जी को बुलाने का संकल्प किया और कुछ ऋषि, मुनि, श्री राम चन्द्र जी को लेने के लिये चले गये। जब श्री राम चन्द्र जी पम्पासर के निकट पहुँचे तो अचानक ही सीधे-सीधे रास्ते पर चलते-चलते हटकर एक पगडण्डी पर चल पड़े। ऋषियों-मुनियों ने कहा कि, ''महाराज! जिस रास्ते से आप मुड़े हैं, यह रास्ता कहीं भी नहीं जाता। यहाँ एक झौंपड़ी है, जिसमें एक बहुत निम्न जाति की महिला शिवरी रहती है। यह रास्ता आगे झाड़ियों में जाकर अलोप हो जाता है, जिस स्थान पर हम आपको ले जा रहे हैं, वह खुला स्थान है।''

श्री राम चन्द्र जी ने कहा कि, ''तुम सभी को सूचना दे दो, सभी ऋषियों-मुनियों को इकट्ठा कर लो, जिस मनोरथ के लिये तुम मुझे ले जा रहे हो, उस पर विचार की जायेगी तथा फिर ये यत्न भी किये जायेंगे जिससे निर्मल जल की प्राप्ति हो सके।'' सभी ऋषि-मुनि अपने-अपने आश्रमों की ओर वापिस गये और आस-पास के सभी ऋषियों को इकट्ठा कर लिया।

इधर श्री राम चन्द्र जी, लक्ष्मण जी, सीता जी सहित जब काफी गहरे जंगल में चले गये तो क्या देखते हैं कि एक महिला सामने पूर्ण रूप से समाधि लगाये बैठी है और अन्दर ही अन्दर श्री राम जी के दर्शनों की प्रतीक्षा कर रही है और मन में ऐसे भाव पैदा हो रहे हैं -

जे तू वतहि अंडणे हभ धरति सुहावी होइ।
हिकसु कंतै बाहरी मैडी वात न पुछै कोइ॥
पृष्ठ - 1095

तू चउ सजण मैडिआ डेई सिसु उतारि।
नैण महिंजे तरसदे कदि पसी दीदारु॥ पृष्ठ - 1094

नेत्रों में से प्रेम अश्रु बह रहे हैं, समस्त चौगिर्दे वातावरण से बेखबर होकर अपने ध्येय में अपना आपा गवाँ चुकी है। उस समय श्री राम चन्द्र जी सामने जाकर खड़े हो गये तथा 'शिवरी' कहकर आवाज़ लगाई। तीन आवाजें लगाने के पश्चात जब शिवरी ने देखा कि जिस अस्तित्व का वह सिमरण कर रही है, वह अन्दर से गायब हो गया। उसके नेत्र खुल गये, उसकी उस समय ऐसी अवस्था हो गई जैसे मछली की पानी के बिना हो जाया करती है। कहने लगी, ''हे प्रभु! तुम कहाँ चले गये?'' आवाज़ आई, ''नेत्र खोलो, हम तेरे सामने खड़े हैं।'' जब नेत्र खोलती है तो श्री राम चन्द्र जी को देखकर शिवरी अति प्रसन्न होती है, चरण वन्दना करती है, उसके बाद उसे ध्यान आया कि मेरे घर राम जी आए हैं, मैं गरीबनी हूँ इनकी सेवा कैसे करूँ? शिवरी को कुछ दिन पहले पता चल गया कि आपने पपासर में चरण रख कर पवित्र करने आना है, उसने चख-चख कर अर्थात परखकर मीठे-मीठे बेर इकट्ठे किये हुए थे, हर एक बेर को सूये (दाँत) में लेती जो बेर मीठा होता उसे रख लेती, जो खट्टा होता उसे फैंक देती। इस प्रकार उसने मीठे-मीठे बेर इकट्ठे करके रखे हुए थे, वह तुरन्त अन्दर गई और लाकर अंजलि भर कर एक-एक अंजलि श्री राम जी तथा लक्ष्मण जी को अर्पण कर दी। श्री राम चन्द्र जी प्यार में मस्त हुए बेर खा रहे हैं और बहुत ही मीठी-मीठी प्रशंसा कर रहे हैं कि, ''शिवरी! इसमें कौन सी किस्म का अमृत डाला हुआ है कि इन्हें खाते-खाते प्यार की खुमारी चढ़ती जा रही है।'' पर लक्ष्मण जी ने देखा कि प्रत्येक बेर पर दाँत का निशान लगा हुआ है, यह बात मन में आई कि ये सारे बेर जूठे हैं। श्री राम चन्द्र जी बेपरवाह हुए, खाये जा रहे हैं और उसने राम चन्द्र जी को सावधान करते हुए कहा कि ये सारे बेर जूठे हैं। आपने कहा, ''प्यार में न तो जूठा होता है, न ही पवित्र होता है, न अपना होता है, न बेगाना होता है, यह तो परम आनन्द की अवस्था हुआ करती है। जो प्रबल भावना इस समय शिवरी के मन में है, वह संसार में शायद ही किसी के मन में हो। वह अब अपने आपे (नियन्त्रण) में नहीं है, इसने अपना आपा (निजित्व) मुझ में लीन कर दिया है, मैं इस प्यार का बन्धा हुआ, इस झौंपड़ी में आया हूँ। पम्पासर सरोवर का तो एक कारण मात्र बना है, परन्तु वास्तव में, मैं इस प्यार के वश के कारण यहाँ आया हूँ।'' कहते हैं कि लक्ष्मण जी ने वे बेर अपनी शक्ति से किसी दूर पर्वत पर फैंक दिये जिनकी संजीवनी बूटी बनी, जिसे लेने के लिये हनुमान जी गये और लाकर लक्ष्मण जी के प्राण बचाए।

वहाँ से विदा लेकर श्री राम चन्द्र जी पम्पासर की ओर चले गये और वहाँ पर इकट्ठे हुए ऋषियों-मुनियों ने अपनी व्यथा बताई। आपने सभी को बताया कि आप सभी प्रभु का नाम लेवा हो, घोर तपस्या करते हो, सन्तों के चरणों में सता होती है, वे तीर्थों की मैल दूर करने की समर्थ रखते हैं। तुम सभी बारी-बारी अपने चरण इसमें डालते जाओ जिसके चरणों में पूर्ण पवित्रता होगी, वह इस पानी को साफ कर देगा। सभी ने अपने-अपने चरण डाले, पर पानी पर कोई प्रभाव न पड़ा। उस समय आपने सभी को सम्बोधन करते हुए कहा कि इस चौगिर्दे में कोई राम भक्त रहता हो जिसकी वृति राग तथा द्वैष से निर्लेप हो, प्रभु को प्यार करने वाला हो, उसके चरण पड़ते ही यह जल निर्मल हो

जायेगा। सभी ने कहा कि यहाँ और कोई राम भक्त नहीं है। उस समय श्री राम चन्द्र जी ने कहा कि जिसे तुम कई बार मार-पीट कर उसे यहाँ से भगा चुका हो, वह राम भक्तिन है। तप तथा भक्ति में बहुत अन्तर है। तप निजी शक्तियों को उजागर करता है पर भक्ति इस सारे परपंच के मालिक को रिझाती है। भक्ति विशेष चीज़ है और महान उतम है, जिस शिवरी को तुमने धक्के मारे, उसे लेकर आओ, उसके चरण डलवाओ। मजबूर होकर उन्हें शिवरी को लाना पड़ा और श्री राम चन्द्र जी ने उसके चरण उस जल में डलवाए। वह जल जो एक पात्र में डाला हुआ था उसमें शिवरी के चरण डलवाए और फिर वह जल पम्पासर में डलवा दिया। वह पानी कुंगू की तरह निर्मल हो गया। सभी हैरान हो गये। श्री राम चन्द्र जी ने बताया कि सन्तों की धूलि में कितनी महान बरकतें होती हैं। गुरू महाराज जी भी फ़मान करते हैं-

तीरथि अठसठि मजनु नाई।
सत संगति की धूरि परी उडि नेत्री
सभ दुरमति मैलु गवाई॥ पृष्ठ - 1263

यहाँ तक आप फ़रमान करते हैं -

जितनी स्रिसटि तुमरी मेरे सुआमी
सभ तितनी लोचै धूरि साधू की ताई॥ पृष्ठ - 1263

पर यह धूलि उसको मिलती है जिसके भाग्य में लिखी हो -

नानक लिलाटि होवै जिसु लिखिआ
तिसु साधू धूरि दे हरि पारि लंघाई॥ पृष्ठ - 1263

सो इस तरह से इस हुक्मनामें में, हमारी ज्ञात के लिये यह है - करो सभी प्रार्थना, सभी बोलो -

पावउ दानु ढीठु होइ मागउ मुखि लागै संत रेनारे॥
पृष्ठ - 1263

यह धूलि दो तरह की हुआ करती है, एक चरणों की धूलि हुआ करती है, एक सन्तों के मुख की धूलि हुआ करती है जिसमें जन्म जन्मातरों की मैल दूर करने की समर्थ हुआ करती है और यह हउमैं की मैल दूर कर देती है -

जन की धूरि मन मीठ खटानी।
पूरबि करमि लिखिआ धुरि प्रानी।
अहंबुधि मन पूरि थिधाई।
साध धूरि करि सुध मंजाई।
अनिक जला जे धोवै देही।
मैलु न उतरै सुधु न तेही॥ पृष्ठ - 199

साध संगत जी! कलयुग का समय है, मनुष्य को पार उतारने वाले जप, तप तथा इनके फल अब मन्द हो चुके हैं, कलयुग ने मर्यादा सहित चल रहा जीवन, उलट-पुलट कर दिया है, हर वर्ग में पाखण्ड प्रधान हो गया है, प्राचीन मूल्य जिन्हें पूर्व श्रेष्ठ पुरुष निज धर्म कहा करते थे, उसकी परिभाषा इतनी बदल गई है कि उन बातों को कम अम्ल वालों की बातें कहा जाता है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में धर्म प्रधान था, मर्यादाएं थी, सच बोलते थे, छल और कपट करना कोई जानता ही न था, अपनी प्रशंसा स्वयं कोई भी नहीं किया करता था बल्कि यह नियम प्रयोग में लाया जाता था -

करि के नीच सदावणा तां प्रभु लेखै अंदरि पाई॥
भाई गुरदास जी, वार 1/16

नेकी करने के बाद कोई अपनी प्रशंसा नहीं किया करता था, विनम्रता में रहते थे और वाहिगुरू का धन्यवाद करते थे कि आपने मेरे जीवन को सेध देकर मुझे पापों से, बुरे कर्मों से बचा लिया। अब इसके विपरीत कोई भी वर्ग ऐसा नहीं रहा, जहाँ सच की प्रधानता हो, झूठ बोलकर जीवन निर्वाह करना, चीजों में मिलावट करके असली के भाव बेचना, नकली दवाईयाँ देकर मंहगे-मंहगे तथा बढ़-चढ़ कर पैसे लेना, अपनी प्रशंसा स्वंय करना, राजसी लोग अपने हित के लिये कुर्सियाँ प्राप्त करते हैं, किसी सत्य मार्ग पर चलने वाले आदमी को कम अम्ल वाला गिना करते हैं। कूट नीति जिसमें धोखा तथा छल प्रधान हो उसे सच्चे जीवन के विपरीत, सुलझा हुआ, अम्ल वाला राह समझते हैं, वचनों का कोई महत्व नहीं रहा, कहते हैं वचन में बन्ध जाना अर्थात प्रतिज्ञा करना मूर्खता है। जो धोखा देते हैं, छल कपट करते हैं उन्हें समाज में सम्मान दिया जाता है। गुरू महाराज जी ने ऐसे जीवन को रद्द कर दिया है। भाई गुरदास जी बताते हैं -

कलि आई कुते मुही खाजु होइआ मुरदार गुसाई।
राजे पापु कमांवदे उलटी वाड़ खेत कउ खाई।
परजा अंधी गिआन बिनु कूड़ कुसतु मुखहु आलाई।
चेले साज वजाइदे नचनि गुरू बहुतु बिधि भाई।
चेले बैठनि घराँ विचि गुरि उठि घरीं तिनाड़े जाई।
काजी होए रिसवती वढी लै कै हकु गवाई।
इसत्री पुरखै दामि हितु भावै आइ किथाऊँ जाई।
वरतिआ पापु सभसि जगि माँही॥
भाई गुरदास जी, 1/30

और गुरू नानक पातशाह ने फ़रमान किया था -

कलि काती राजे कासाई धरमु पंख करि उडरिआ।
कूड़ु अमावस सचु चंद्रमा दीसै नाही कह चड़िआ।
हउ भालि विकुंनी होई। आधेरै राहु न कोई।
विचि हउमै करि दुख रोई।
कहु नानक किनि बिधि गति होई॥ पृष्ठ - 145

कलयुग में राजसी लोग एक दूसरे में फूट डालने के लिये कैंची का काम करते हैं और अपने हित की पूर्ति के लिये दूसरे

की जान लेना अपनी चतुराई समझते हैं। चार बड़े–बड़े स्तम्भ धर्म के हुआ करते हैं – पहला स्तम्भ राजा का पवित्र जीवन हुआ करता है। दूसरा स्तम्भ तीर्थों की पवित्रता हुआ करती है, तीसरा बड़ा स्तम्भ साधुओं का सच्चा जीवन होता है, चौथा सत शास्त्र हुआ करता है जिन्हें पढ़कर मनुष्य अपना कल्याण कर सकता हो, परन्तु आज राजसी वर्ग का जो जीवन है वह अपने हित के लिये है और उसका प्रजा के साथ कोई सम्बन्ध नहीं है। धर्म स्थान उन लोगें के हाथों में चले गये जिनका धर्म के साथ दूर का भी सम्बन्ध नहीं है। नास्तिकता प्रधान है, वहाँ की मर्यादाएं तोड़कर मांस, मछलियाँ शराब का प्रयोग कर रहे हैं। सो ये स्तम्भ भी भ्रष्ट हो गये। तीसरा बड़ा स्तम्भ साधु हुआ करते थे जो तप तपस्या की जीती जागती मूरत हुआ करती थी, उन्हें किसी भी तरह से माया का कोई लालच नहीं हुआ करता था, अपना निर्वाह फूंस की झौंपड़ियों में ही कर लिया करते थे पर जनता के लिए स्कूल, कुएं, सड़कें, हस्पताल, परोपकार के अनेक काम कर देते थे। अपने श्रद्धालुओं का पैसा अपने ऊपर खर्च नहीं किया करते थे। सत्य के धारणी होते थे, किसी के साथ ईर्ष्या नहीं करते थे, अन्दर अन्त:करण में ज्योति जला करती थी। पूर्ण ज्योति जगकर, खालसा पदवी प्राप्त करके, परमेश्वर का ही रूप बन जाया करते थे। अब पूरी तरह से उलट हो चुका है, आप सभी जानते ही हो, इसके बारे में मैं बार–बार लिखना ठीक नहीं समझता। चौथा स्तम्भ शास्त्र हुआ करता है। आज के लेखक सत्य का अनुभव करके, अपने परिश्रम से रचे सत्य साहित्य, संसार में नहीं बाटते, इसके विपरीत अनुभवहीन, अधिक से अधिक धन बटोरने के लिये नास्तिक, कामुक साहित्य की रचना करते हैं। यदि उन्हें स्वंय को ज्ञान नहीं तो वे संसार को कैसे ज्ञान दे सकते हैं ? इस प्रकार चारों धर्म के स्तम्भ गिर गये हैं, दूषित हो चुके हैं, प्रकाश के स्थान पर अन्धकार फैला रहे हैं। हमारे लिये कठिन हो गया है कि कैसे इस भवसागर से पार हुआ जाये ? न ही कोई सच्चा गुरू मिलता है जो सेवकों को नदरो–नदरी निहाल करके, उस सच्चे वाहिगुरू जी का घर दिखा दे। बातें बना–बना कर अपना समय पूरा करते हैं। सो इन सभी बातें को गुरू महाराज जी ने विचाराधीन रखते हुए संसार का उद्धार करते हुए, एक सच्चा स्वच्छ मण्डल कायम किया जहाँ परमेश्वर के प्यारे, प्रभु का नाम जपने के लिये, अपनी नींद का त्याग करके, सत्संग में इकट्ठे हो जाते हैं। जहाँ पर कोई भी सांसारिक बात नहीं की जाती और हरि कीर्तन ही होता है।

सो प्यारे ! हमारे ऊपर परमेश्वर की अपार कृपा ही है कि जब सारा संसार गहरी नींद में खर्राटे ले रहा है। उस समय तुम बाणी का आनन्द लूट रहे हो, विचार श्रवण कर रहे हो, कलयुग के प्रधान साधन की बख्शीश आप पर हुई है –

हरि कीरति साध संगति है सिरि करमन कै करमा।
कहु नानक तिसु भइओ परापति
जिसु पुरब लिखे का लहना॥ पृष्ठ – 954

सो मैं यह प्रार्थना कर रहा था कि जीव जो बहुत यौनियों में से घूमने फिरने के बाद मानस जन्म धारण करके विचर रहा है, उसके अन्दर अज्ञान का अन्धेरा छाया हुआ है, रोशनी नाम की कोई चीज़ है ही नहीं, इस प्रकार जीव डाँवाडोल हो गया, कोई रास्ता बताने वाला भी नहीं मिलता, यदि रास्ता बताने वाला गुप्त है भी कोई, तो पूछने वाला कोई नहीं है ? यदि हम प्राचीन शास्त्रों पर विचार करते हैं तो उनके द्वारा कल्पित किया गया ईश्वर करन–कारण समरथ न होने के कारण, उसे जग रचना के लिये प्रकृति तथा जीव की जरूरत पड़ती है। यह ल म्बा विषय है जिस पर मैं बहुत अधिक न कहता हुआ इतना ही कहता हूँ कि अपने–अपने विचार, संसार में प्रचलित हो गये, इसलिये हम परमेश्वर से दूर हो गये। संसार इतना दुखी हो गया कि महात्मा बुद्ध को निस्संकोच यह कहना पड़ा कि, ''यह संसार दुखों का घर है। इसमें सुख नाम की कोई वस्तु नहीं है।'' गुरू नानक पातशाह ने यह तो नहीं कहा कि संसार में सुख नहीं है पर आपने यह जरूर कहा है –

बाली रोवै नाहि भतारु।
नानक दुखीआ सभु संसारु॥ पृष्ठ – 954

परन्तु साथ ही साथ आपने इसका इलाज भी बता दिया कि जिन प्रेमियों को नाम की पहचान हो गई, नाम मण्डल में प्रवेश कर गये, वे सुखी हैं, क्योंकि उन्होंने नाम को मान लिया–

मंने नाउ सोई जिणि जाइ।
अउरी करम न लेखै लाइ॥ पृष्ठ – 954

संसार क्यों दुखी हो गया ? इस पर सभी सियाने लोगों ने विचार किया, यह शास्त्रों में सांतय, न्याय, विशेषक तथा पतंजलि ने स्पष्ट निर्णय दिया है कि संसार में प्रभु अकेला नहीं है, उसके साथ दो तत्व और हैं, एक पुरुष (जीव), दूसरा प्रकृति, तीसरा प्रभु स्वंय है। प्रभु सत–चित आनन्द है परन्तु इसके विपरीत प्रकृति जड़ तथा दु:ख रूप होने के कारण वह क्षण भंगुर तथा निरा दु:ख ही है। जब गुरू नानक पातशाह ने सुमेरू पर्वत पर महान विद्वान पुरुष जिन्हें सिद्ध कहा गया है, वहाँ वचन किये और स्पष्ट किया कि एक ही परमेश्वर अनेक रूप धारण करके चर–अचर में विद्यमान है, उसका स्वरूप जो प्रकृति से सन्धि करके संसार के कारोबार निभा रहा है उस स्वरूप को जीव कहते हैं। जब वही जीव नाम के बल पर ऊँचा उठता है, अन्नमयी कोश, प्राणमयी कोश, मनोमयी कोश, विज्ञानमयी कोश,आनन्दमयी कोश से ऊपर

उठता है मन, बुद्धि, चित अहमभाव को पार करता हुआ आत्म मण्डल में प्रवेश करता है तो मन की जगह अ-मन हो जाता है जिसे उनमन कहा जाता है, उस समय दु:ख का नामोनिशा भी नहीं रहता। सिद्धों ने कहा कि यदि सब कुछ ही परमेश्वर है तो हमारा एक संशय दूर करो। वह यह है कि जो दृष्टिमान नेत्रों से देखा जा सकता है, जीभ द्वारा जिसका स्वाद चखा जा सकता है, हाथों से स्पर्श किया जा सकता है, नाक द्वारा सूंघा जा सकता है, कानों द्वारा सुना जा सकता है। इस वर्ग को हम प्रकृति कहते हैं, प्रकृति दु:खों का घर है, क्षण भंगुर है, एक क्षण के करोड़वे भाग में इसमें परिवर्तन होता है, इसलिये इसमें दु:ख ही दु:ख है, जीव प्राकृतिक दुखों के कारण विलाप करता है। हम हठ योग के बल द्वारा प्राणायाम करवा कर, इस जीव को प्रकृति से दूर करना चाहते हैं ताकि कैवल्य अवस्था को प्राप्त कर सके। ईश्वर को हम इतना ही जानते हैं कि उसकी सता की लहर प्रकृति पर पड़कर इसके तीन गुणों को हरकत देती है इसलिये हम जीव, संसार तथा ईश्वर तीन तत्व कहते हैं, "हे नानक! तू यह कहता है कि यहाँ परमेश्वर के अतिरिक्त और कोई हुआ ही नहीं, उसमें दु:ख का भाव कभी भी प्रकट नहीं हो सकता क्योंकि वह सत-चिता-आनन्द है। दु:ख जड़ तत्व का कार्य है चेतन तत्व का नहीं, इसलिये हमें सन्देह पैदा होता है कि गुरू नानक तेरा ज्ञान अपूर्ण है। हमारे जो चार शास्त्र सांख्य शास्त्र, योग शास्त्र, विशेषक शास्त्र तथा न्याय शास्त्र हैं इनमें पूरी तरह से खोज करके विचार किया है तथा पूरी तरह से सहमति प्रकट की है, यहाँ तक की गीता में भी कृष्ण महाराज का ऐसा फ़रमान है कि प्रकृति चर-अचर जीवों की रचना करती है। सो तीन चीज़ें तो अनादि काल से चली आ रही हैं एक जीव, दूसरी प्रकृति जिसे माया अज्ञान भी कहा जाता है। तीसरा स्वंय परमेश्वर सत-चित-आनन्द है। हमने आपके साथ वचन किये हैं, आपका फ़रमान है, 'एको है भाई एको है' इस स्थान पर दूसरा कोई है ही नहीं। आपने विचारों का मूल शुरू करते हुए सिद्धान्त दिया है -

आदि सचु जुगादि सचु।
है भी सचु नानक होसी भी सचु॥ पृष्ठ - 1

इसका यह अर्थ हुआ कि यहाँ पर वाहिगुरू के अतिरिक्त और कोई है ही नहीं, फिर तू हमें यह बताने की कृपा कर कि दु:ख कहाँ से आ गया? जो है ही नहीं और फिर संसार कहाँ से बन गया जो प्रत्यक्ष रूप में नज़र आ रहा है? परमेश्वर को तूने संसार में कैसे घुला मिला कर इकमिक कर दिया? जीव कहाँ से आकर, फंस कर दुखी हो रहा है।

उस समय गुरू महाराज जी ने फ़रमान किया कि, "नाथ जी! सारी क्रिया परमेश्वर के हुक्म में चल रही है, हुक्म में ही जीवों की उत्पति हो रही है, हुक्म में ही आकार बने, ऊचा, नीचा, दिखाई दे रहा है। सभी तत्व नाम से ही बने हैं" -

नाम के धारे सगले जंत।
नाम के धारे खंड ब्रहमंड॥ पृष्ठ -284

"नाम निरा ही सता-चित-आनन्द का खजाना है। परमेश्वर ने अपनी माया स्वंय पसारी है, यह माया तुम्हारे कहने के अनुसार अनादि नहीं है, प्रकृति का वजूद, रचना से पहले था ही नहीं।" साध संगत जी! भाई गुरदास जी इस बात को और स्पष्ट करते हुए फ़रमान करते हैं -

निरंकारु आकारु होइ एकंकारु अपारु सदाइआ।
एकंकारहु सबद धुनि ओअंकारि अकारु बणाइआ॥
भाई गुरदास जी, वार 26/2

गुरू पाँचवे पातशाह का फ़रमान है -

अपनी माइआ आपि पसारी आपहि देखनहारा।
नान रूपु धरे बहुरंगी सभ ते रहै निआरा॥
पृष्ठ - 537

और आगे फ़रमान करते हैं -

करण कारण प्रभु एकु है दूसर नाही कोइ।
नानक तिसु बलिहारणै जलि थलि महीअलि सोइ॥
पृष्ठ - 276

सो करन-कारण समरथ वाहिगुरू ही अपनी रचना आप ही रचता है -

आपीन्है आपु साजिओ आपीन्है रचिओ नाउ।
दुयी कुदरति साजीऐ करि आसणु डिठो चाउ।
दाता करता आपि तूं तुसि देवहि करहि पसाउ।
तूं जाणोई सभसै दे लैसहि जिंदु कवाउ।
करि आसणु डिठो चाउ॥ पृष्ठ - 463

जीव अनादि नहीं है, जीव हुक्म में रचे जाते हैं, माया की रचना बहुत ही मनमोहिनी होने के कारण यह जीव को अपनी ओर खींच कर ले जाती है। सत्पुरुष इस जीव को समझाने के लिये संसार में आते हैं कि तेरा चुनाव गलत हो गया, तू वहाँ पर चला गया जहाँ दु:ख भी दु:ख हैं, क्योंकि इस नाम का स्थान हउमैं ने ले लिया, नाम में सुख ही सुख है। जो प्राणी नाम मण्डल में प्रवेश कर लेता है वह परम सुखी हो जाता है। इस माया ने अन्धकार बढ़ा दिया और परिपूर्ण परमेश्वर जो घट-घट में व्याप्त है, उससे अलग होकर समष्टि की दृष्टि छोड़ दी और हउमैं के प्रभावाधीन व्यष्टि (अलगाव) अस्तित्व को अपना लिया। समष्टि प्रभु का ज्ञान है, व्यष्टि हउमैं की दृष्टि है या ऐसे समझ लो कि समुच्चता ज्ञान दृष्टि वाले को प्रतीत होती है और अनेकता अज्ञान दृष्टि में नज़र आती है। सृष्टि जो है वह तो है, पर दृष्टिकोण का

अन्तर है, किसी को यह संसार अलग-अलग दिखाई देता है, एक ऐसे दिव्य दृष्टि वाले हैं, जिन्हें यह संसार स्पष्ट परमेश्वर का रूप ही नज़र आता है। सो नाथ जी! तुम्हारा जो प्रश्न है –

कितु कितु बिधि जगु उपजै पुरखा
कितु कितु दुखि बिनसि जाई ॥ पृष्ठ – -946

उस समुच्चय का समाधान हम इस प्रकार करते हैं –

हउमै विचि जगु उपजै पुरखा
नामि विसरिऐ दुखु पाई ॥ पृष्ठ – -946

नाम को भुला कर, दुखों की प्राप्ति होती है, नाम में सुख है, नाम पूरे सतगुरू से प्राप्त होता है। सो इस प्रकार प्रभु के नाम से जीव दूर हो गया और दु:ख ही दु:ख बढ़ गये। प्रकृति दुखों का रूप है, पर जिसे नाम प्राप्त है, उसे प्रकृति भी परमेश्वर रूप नज़र आती है म्योंकि उसकी दृष्टि समष्टि (समुच्चता) वाली है व्यष्टि (अनेकता) वाली नहीं है। आज का मनुष्य सुखी होने के लिये धन कमाता है, लोगों में यश प्राप्त करता है, अच्छे वाहन खरीदता है, घर सजाता है, मंहगे से मंहगे गलीचे घरों में बिछे होते हैं। ये सभी कुछ क्यों है क्योंकि इस जीव को पता नहीं कि सुख की प्राप्ति कहाँ से होती है। जीव प्राकृतिक वस्तुओं के अम्बार लगाकर उनके समूह में सुख ढूँढता है, पर इस जीव को कोई सुख प्राप्त नहीं होता, उसी प्रकार से ठण्डी आहें भरता रहता है, वही डाक्टर बार-बार खून चैक करते हैं, पैसे लुटाता है, यह अमीरी कोई भी सुख नहीं दे सकती। थोड़ी देर के लिये कुछ आराम महसूस होता है, दुनियाँ के पदार्थ क्षण भंगुर हैं, यह आर्थिक बहुलता, अत्याधिक ज़मीन-जायदाद, कारें, वातानुकूलित चीज़ें तथा अनेक आधुनिक सुख, शारीरिक सुख तो दे सकते हैं पर मन की शान्ति प्राकृतिक वस्तुओं में नहीं हुआ करती क्योंकि ये चीज़ें स्वंय ही क्षणभंगुर हैं, हर समय घटते-बढ़ते रहते हैं। सुन्दर कार मिल गई, थोड़ी देर के लिए खुशी मिल जाती है पर फिर मन वहीं का वहीं आ जाता है। कोठी की चठ (मुहुर्त) की, संगी साथी आए उन्होंने प्रशंसा की परन्तु साथ ही साथ यह विचार भी मन में आया कि इतना पैसा उधार लेकर इस पर लगाया है, वह कैसे उतरेगा? सो कोठी के कर्ज़ें ने सभी चावों, मल्हारों के सुखों को खत्म कर दिया। सो सुख का, दु:ख का सम्बन्ध मन से है यदि मन ने नाम की परिपूर्णता को मान लिया तो सुख ही सुख है। यदि नहीं माना तो रेत में से तेल निकालने वाली बात की तरह एक फालतू का प्रयास है। महाराज जी फ़रमान करते हैं –

सुंदर सेज अनेक सुख रस भोगण पूरे।
ग्रिह सोइन चंदन सुगंध लाइ मोती हीरे।
मन इछे सुख माणदा किछु नाहि विसूरे।
सो प्रभु चिति न आवई विसटा के कीरे।
बिनु हरि नाम न सांति होइ कितु बिधि मनु धीरे॥

पृष्ठ – 707

सुन्दर-सुन्दर सेजें हैं, ऐसे हीरे मोतियों की लड़ियाँ, झलारें लटक रही हैं जिनके उपर नेत्र भी नहीं टिकाए जा सकते और हर प्रकार के रसों का भोग करता है, कोई भी रस बीमारी पैदा नहीं करता, दीवारों पर सोने की पर्तें चढ़वाई हुई हैं, सुगन्धियाँ आदि चन्दन के लेपों से प्राप्त हो रही हैं। मनचाहा सुख लूट रहा है, किसी चीज़ की कोई कमी नहीं है, पर फिर भी सुख की प्राप्ति क्यों नहीं होती है, रक्त चाप (blood pressure) बढ़ गया है, दिल की धड़कन मर्यादा पूर्वक नहीं चल रही है। महाराज कहने लगे, सुखों का स्त्रोत केवल नाम है, जिस हृदय में वाहिगुरू की याद सदीवी कायम नहीं हुई, उसकी हस्ती विष्ठा के कीड़े के समान है –

सो प्रभु चिति न आवई विसटा के कीरे॥ पृष्ठ – 707

जब तक यह मन उलट कर उनमन नहीं बन जाताऽ जब तक नाम की परिपूर्णता नहीं मानता, तब तक सुख की प्राप्ति नहीं हो सकती, जैसा कि फ़रमान है –

बिनु हरि नामु न सांति होइ कितु बिधि मनु धीरे॥

पृष्ठ – 707

बिना नाम के मन शान्त नहीं होता, फिर जब अन्दर शान्ति ही नहीं है तो मन धीरज अवस्था में कैसे रह सकता है? सो इन सभी विचारों से हम यह निश्चय कर सकते हैं। गुरू महाराज जी ऐसा फ़रमान करते हैं –

ऐसा जगु देखिआ जूआरी।
सभि सुख मागै नामु बिसारी॥ पृष्ठ – 222

नाम प्राप्ति के लिए जिसे अमृत भी कहा गया है जैसा कि –

अंम्रितु हरि हरि नामु है मेरी जिंदुड़ीए
अंम्रितु गुरमति पाए राम।
हउमै माइआ बिखु है मेरी जिंदुड़ीए
हरि अंम्रिति बिखु लहि जाइ राम॥ पृष्ठ – 538

गोरख नाथ जी! अपने विचारों में अन्तर केवल इतना ही है कि तुम तीन तत्वों को अनादि मानते हो। तुहारा परमेश्वर करन-कारण तथा समरथ नहीं है क्योंकि उसके शरीर भी अनादि हैं। तुम अपने शास्त्रों के अनुसार यह तो मानते हो कि जब पूर्ण रूप से निर्मल होकर निर्वाण प्राप्त कर लेता है और आवागमन के चक्कर से मुक्त हो जाता है, उसके लिये प्रकृति तथा माया अलोप हो जाती है, सारे संसार के लिये नहीं होती तो फिर तुम्हारे मन को हम कह सकते हैं कि कोई ऐसी अवस्था है, जहाँ पर जीव

का अलगपन समाप्त होकर केवल परमात्मा ही रह जाता है। हम कहते हैं कि जीव अज्ञानवश होकर हउमैं अधीन, एक प्रभु की तो प्रकृति (माया), अपने आप, तथा प्रभु तीन तत्व महसूस करता है, हम कहते हैं कि जीव भ्रम के कारण अपना अस्तित्व मानता है, जीव का अस्तित्व भ्रम वश है, जैसे रस्सी में साँप का आभास होता है, रेतीले मैदान में पानी और सीप में चान्दी, आसमान में नील। अन्तर क्या हुआ? तुम मान लो प्रभु करन-कारण समरथ है, वह अपनी शक्ति से माया तथा हउमैं की रचना करता है तथा भ्रम के कारण परम चेतन शक्ति ही जीव भासित होने लग जाती है, दु:ख शुरू हो जाते हैं, नाम वह निर्मल अवस्था है, जिसे तुम निर्वाण अवस्था कहते हो, इस मण्डल में कोई भी दु:ख नहीं है। इसी प्रकार नाम मण्डल में भी कोई दु:ख नहीं है, नाम की प्राप्ति सतगुरू की कृपा पर है।

इसकी खोज में देव, अदेव, गुप्त लोगों की रूहें, सभी लगे हुए हैं, पर यह किसी के हाथ में नहीं आता क्योंकि इसका स्त्रोत पूर्ण सतगुरू है। 'नाम' हर एक हृदय में वास करता है पर उस तक पहुँचने के लिये बहुत ही विश्वास, धीरज, दृढ़ता सत्य जीवन अपनाने की आवश्यकता है। हमारे अन्दर अनेक पर्तें चढ़ी हुई हैं, जीव को इन पर्तों को पार करके जाना पड़ता है, वहाँ पर पहुँचते ही तीन तत्वों के स्थान पर एक ही परम तत्व रह जाता है। महाराज जी फ़रमान करते हैं –

नउ निधि अंम्रितु प्रभ का नामु।
देही महि इस का बिस्रामु।
सुंन समाधि अनहत तह नाद।
कहनु न जाई अचरज बिसमाद॥ पृष्ठ –293

शुरू-शुरू में मनुष्य के मन में बहुत विचार आते हैं कि मैं सत्संग करूं। गुरू घर में प्रवेश ले लेता है और सोचता है कि उसके दर्शन कर लूँ जिसकी ज्योति हर स्थान परिपूर्ण है–

जिमी जमान के बिखै समसति एक जोत है।
न घाट है न बाढ है न घाटि बाढि होत है॥

अकाल उसतति

गुरू से (गुरमत में पाँच प्यारों द्वारा) मूल मन्त्र तथा गुरू मन्त्र की दात प्राप्त करता है। हमारे दिलों में नाम की पूरी कद्र न होने के कारण, हम सुना अनसुना कर देते हैं फिर सोचते हैं कि नाम मुझे कहाँ से मिलेगा? सभी गुरू अपने-अपने सेवक की अवस्था के अनुसार उसे मन्त्र की दात देते हैं, मन्त्र का लगातार सिमरण करने से, गुरू की सेवा करने से ऐसी अवस्था अन्दर पैदा हो जाती है जहाँ वह अपना तन-मन-धन गुरू पर कुर्बान करने के लिये तैयार हो जाता है, पर ऐसा कोई बिरला पुरुष है क्योंकि हमें नाम की अपेक्षा अपने सांसारिक कार्यों से प्यार अधिक है। हमारे अन्दर वैर भरा हुआ है, फिर नाम कहाँ से प्रवेश करे? ये कुछ ऐसी बातें हैं जिन्हें हम अनदेखा ही करते रहते हैं। नाम मार्ग पर चलते ही हमारी वासनाओं की सीमाएं न होने के कारण हम अरदास करते रहते हैं कि जो हमें मिल भी जाती है –

जो मागहि ठाकुर अपुने ते सोई सोई देवै।
नानक दासु मुख ते जो बोलै ईहा ऊहा सचु होवै॥

पृष्ठ – 681

एक ऐसे प्रेमी होते हैं जो नाम जप की उच्च अवस्थाएं प्राप्त कर लेते हैं, उनमें शक्तियाँ आ जाती हैं, उनकी वाह-वाह संसार में होने लग जाती है, वे इन शक्तियों का प्रयोग करके नाम को भूल जाते हैं। वे लगन तथा दृढ़ता में ही कायम नहीं रह सकते, इसलिये वे बीच में लटकते रहते हैं। नाम जप करते समय पहले और अधिक तीव्र इच्छा थी पर त्यों-त्यों उस मार्ग पर चलता है, कम अधिक जिज्ञासा वालों के साथ बातें करता है तो यह लगन भी मन्द पड़ जाती है। हमारा प्यार इन पदार्थों से टूट नहीं सकता जो सुख हमें प्राप्त होता है, उसी में ही हम मस्त हो जाते हैं और नाम तक पहुँचने की प्रबल इच्छा शिथिल पड़ जाती है। इसके विपरीत वह शुभ कर्म, नेकी करता है, पर अभिमान भी करता है सभी किये गये सकाम कर्मों का फल इसे भोगना पड़ता है –

ददै दोसु न देऊ किसै दोसु करंमा आपणिआ।
जो मै कीआ सो मै पाइआ दोसु न दीजै अवर जना॥

पृष्ठ – 433

और कई महात्मा कहते हैं –

भोगे बिन भागे नही करम गती बलवान।

सो इस रास्ते में अनेक रूकावटें, अड़चनें हैं जो पूर्ण तत्ववेता महापुरुषों की संगत किये बगैर दूर नहीं होती। महापुरुषों की संगत के बिना वह प्यार और सत्कार नहीं बन पाता जहाँ पर जिज्ञासु लेने के लिये तथा महापुरुष देने के लिये तैयार हो। तर्क-वितर्क, संशयों का इतना जोर है जिसमें व्यक्ति इतना उलझ जाता है कि उसे कुछ भी पता नहीं चलता। गुरू महाराज साधु की आवश्यकता पर अधिक ज़ोर देते हैं। साध संगत जी साधु कौन है? क्या साधु भेष धारण करके, सिंघ बन जाने से, ब्रह्मज्ञानी कहलाने से बन जाता है? ऐसा साधु बनने से, कहलवाने से कुछ नहीं बनता, जिसने कुछ बनने की भावना ही त्याग दी है। ऐसे जो पुरुष हैं जिन्हें दिव्य दृष्टि प्राप्त है, वे चाहे घरों में हों, खेती-बाड़ी व्यापार आदि करते हों, वे जाग्रत रूहें होती हैं, स्वंय तर चुके हैं, दूसरों का भी उद्धार कर देते हैं, पर उनका मेल सौभाग्य के बिना नहीं हो सकता। जब तक जीव के अन्दर से अहमभाव समाप्त नहीं होता, 'मैं' 'मेरा' खत्म नहीं होता, चाहे जितनी मर्ज़ी

प्रार्थनाएं क्यों न करता हो कि वाहिगुरू जो मैं कर्म करता हूँ, सभी तेरे खजाने में ज़मा करता हूँ पर अन्दर से कर्मों से भावना नहीं तोड़ता, इसलिये जीव कर्मों के चक्करों में से नहीं निकल पाता क्योंकि हउमैं के मण्डल में है। इस हउमैं में हउमैं का इलाज रखा हुआ है जैसा कि फ़रमान है –

हउमै एहा जाति है हउमै करम कमाहि।
हउमै एई बंधना फिरि फिरि जोनी पाहि।
हउमै किथहु उपजै कितु संजमि इह जाइ।
हउमै एहो हुकमु है पइऐ किरति फिराहि।
हउमै दीरघ रोगु है दारू भी इसु माहि।
किरपा करे जे आपणी ता गुर का सबदु कमाहि॥

पृष्ठ – 466

इस जीव को हउमै को खत्म करने के लिये शबद की साधना करनी पड़ती है; फिर यह शबद धीरे-धीरे हउमै की जन्जीरों को काट देता है तथा हउमै का नाश हो जाता है। हउमै टूटते ही नाम की प्राप्ति हो जाती है क्योंकि हउमै तथा नाम एक स्थान पर नहीं टिकते –

हउमै नावै नालि विरोधु है दुइ न वसहि इक ठाइ॥

पृष्ठ – 560

जिस प्रेमी ने परमेश्वर को हर घट में पहचान लिया जिसके अन्दर नाम धुन जाग पड़ी, जिन्होंने परमेश्वर के खुले नेत्रों से दर्शन कर लिये, वे परमेश्वर ही हुआ करते हैं। जैसा कि गुरू महाराज जी का फ़रमान है –

जिन्हा न विसरै नामु से किनेहिआ।
भेदु न जाणहु मूलि सांई जेहिआ॥ पृष्ठ – फ-स्त्र

वास्तव में, है तो सभी घटाओं में परमेश्वर, जब अलग-थलग होकर सारी सृष्टि को देख रहा होता है, उस समय उसका नाम कुछ भी कहो, वाहिगुरू कहो, परमात्मा कहो, वह अपने आसन पर बैठकर चाव से सृष्टि देख रहा होता है। वही परमेश्वर जब प्रकृति में से अपने अनेक शरीरों को चला रहा होता है, उस समय उसी को ब्रह्म, आत्मा कहा जाता है। जब यह समष्टि आत्मा, अकेले-अकेले (व्यष्टि) शरीरों की क्रिया को सता दे रहा होता है, उस समय इसकी परिभाषा जीव आत्मा हुआ करती है, यह जीव आत्मा अपने पद से और नीचे गिरती है, पहले इसके उपर आनन्द का पर्दा पड़ता है, फिर बुद्धि का पर्दा पड़ता है, फिर फुरने (विचारों) से घिर जाता है, फिर शारीरिक शक्ति का पर्दा पड़ता है अन्त में यह अपने आप को बिल्कुल ही भुला कर साढ़े तीन हाथ की काली, गोरी, सफेद, देही, मनुष्य, औरत मानना शुरू कर देता है। सो यह जीव आत्मा जीव पदवी से भी नीचे बेसुध होकर अपने आपको शरीर मानती है। ये पाँच पर्दे जिनके क्रमशः नाम आनन्दमय, विज्ञानमय, मनोमय प्राणमय तथा अन्नमय कोश हैं। वे जीव आत्मा के पतन होने के नीचे ढलान में पड़े हुए ठिकाने हैं। इस प्रकार जो परिपूर्ण परमेश्वर सारी सृष्टि को एक रस होकर सम्भाल रहा है, उस समय वह समष्टि के रूप में विराट कहलाया करता है। उसकी creation (सरंचना) का कोई भी अंग अलग नहीं होता, वह एक ही ड्डश्स्त्रब (शरीर) होती है, इस समुच्चता को ब्रह्म कहा जाता है, यही सता जब छिन्न-भिन्न हो जाती है तो इसका नाम भी छिन्न-भिन्न हो जाता है, यहाँ तक इसका पतन हुआ प्रतीत होता है। बेशक प्रभु सदा ही निर्लेप है परन्तु भ्रम के कारण शरीर जीव-आत्मा, आत्मा, परमात्मा अलग-अलग प्रतीत होता है। यही सता पूरी तरह से भूल कर माया के प्रभावाधीन शरीर कहलाने लग जाती है। शरीर के रंगों को, शरीर के सम्बन्धों में पूरी तरह से रूचकर उसमें पूरी तरह से खंचित होकर, एक प्रकार नशा सा चढ़ जाता है जिसे बाणी में 'मतवारा' होने वाला नशा कहा गया है। तीन गुणों रजोगुण, तमोगुण, सतोगुण की मायिक नींद इसे घेर लेती है, फिर यह किसी के जगाने पर भी नहीं जागता। महापुरुष ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाकर आवाज़ें देते हैं, बाणी में फ़रमान आता है कि यह चित को नहीं फेरता –

फरीदा कूकेदिआ चांगेदिआ मती देदिआ नित।
जो सैतानि वंञाइआ से कित फेरहि चित॥

पृष्ठ – 1378

सारा संसार गुरू महाराज जी के फ़रमान के अनुसार एक बहुत ही गहरी निद्रा में सोया पड़ा है जिसके बारे में संकेत देते हुए फ़रमान करते हैं –

तिही गुणी संसारु भ्रमि सुता सुतिआ रैणि विहाणी।

पृष्ठ – 920

और अनेक प्रकार के सपने ले रहा है, गुरू महाराज जी ऐसे सपने लेने वालों को मूर्ख कहते हैं क्योंकि वे सपनों में से बाहर नहीं निकल रहे। अरबों-खरबों वर्षों तक सपने लेने के बाद भी इसकी नींद नहीं खुली, कारण यह है कि तत्व वेता महापुरुष नहीं मिला और उसने इस पर कृपा करके इसे गहरी नींद की गफलत में से बाहर नहीं निकाला। जो अवस्था हमारे पर व्यतीत हो रही है और जो हमारे चौगिर्दे में हमारा आपा निजित्व बान्धा गया है, उसमें से निकलना हमारे लिये बहुत ही कठिन है, क्योंकि सैकड़ों बन्धन हमारे चारों ओर पड़े हुए हैं, इन सैकड़ों बन्धनों के समूह को हउमै कहा है –

सुपने सेती चितु मूरखि लाइआ।
बिसरे राज रस भोग जागत भखलाइआ।
आरजा गई विहाइ धंधै धाइआ।

पूरन भए न काम मोहिआ माइआ।
किआ वेचारा जंतु जा आपि भुलाइआ॥ पृष्ठ - 707

यह सभी कुछ क्यों होता है। एक-दो-चार-दस हज़ार व्यक्तियों के साथ ऐसा नहीं होता, यह तो सारी सृष्टि के साथ ऐसा हो रहा है। महाराज जी इसका कारण माया की गहरी नींद बताते हैं, इस नींद का इलाज नाम अमृत बताते हैं। एक नींद तो साधारण होती है, वह व्यक्ति अपने नियत समयानुसार सोता है, समय पर जाग जाता है। एक नींद नशा खाने से जो आती है उसकी नींद काफी लम्बी होती है, जो नींद इस जीव को चढ़ी हुई है वह एक प्रकार की ज़हर का प्रयोग करके चढ़ी हुई है। जब तक ज़हर के विपरीत इसे कोई दवाई न दी जाए, यह उस नींद में से जाग नहीं सकता। गुरू महाराज जी संकेत देते हैं कि प्यारे! इस गहरी गूढ़ नींद का इलाज अमृत हुआ करता है, संसार में यह अमृत किसी पहाड़ पर नहीं छिपा हुआ। किसी समुद्र के नीचे मटके में नहीं रखा हुआ, स्वर्ग में नहीं रखा हुआ, न ही देवलोकों में कहीं छिपा कर रखा हुआ है। इसलिये फ़रमान है -

सुरि नर मुनि जन अंम्रितु खोजदे
सु अंम्रितु गुर ते पाइआ।
पाइआ अंम्रितु गुरि क्रिपा कीनी
सचा मनि वसाइआ॥ पृष्ठ - 918

इस बात का हमें भेद पता चल गया कि यह अमृत गुरू के पास है, वह गुरू कृपा करे तो यह अमृत की दात प्राप्त होती है। अमृत जिसे अग्रेजी में Nectar, संजीवनी बूटी भी कहते हैं, यह कोई प्राकृतिक वस्तु नहीं है, इसे न ही खोजा जा सकता है, न ही देखा जा सकता है, न ही इसे स्पर्श किया जा सकता है, यह एक महान शक्ति है, जो गुरू के अन्दर प्रकट है। इसे ही नाम कहा जाता है।

यह अमृत गुरू से प्राप्त किया जा सकता है, जिसे पूर्ण तौर पर तथा स्पष्ट करते हुए गुरू महाराज जी अमृत के बारे में बताते हैं कि हम अमृत किसी स्वर्गीय जल को नहीं कहते या पाँच प्यारों द्वारा पढ़े हुये मन्त्र जल को नहीं कहते। पदवी उस जल की भी कम नहीं है क्योंकि साधारण जल में शक्ति प्रवेश कर जाती है, पर वह शक्ति बाहर से नहीं आती, गुरू उसके बारे में ज्ञान दे देते हैं -

हउमै माइआ बिखु है मेरी जिंदुड़ीए
हरि अंम्रिति बिखु लहि जाए राम॥ पृष्ठ - 538

वह है कहाँ? महाराज कहते हैं कि कोई घट ऐसा नहीं जहाँ वह अमृत न हो। सभी घटों को नाम शक्ति ने धारण किया हुआ है -

कीता पसाउ एको कवाउ।
तिस ते होए लख दरीआउ॥ पृष्ठ -3
एक कवावै ते सभि होआ॥ पृष्ठ - 1003

गुरू महाराज जी और अधिक स्पष्ट करते हुए फ़रमान करते हैं कि ऐकंकार से शबद धुन हुई, इस शबद धुन का नाम ओंकार रखा गया क्योंकि यह 'ओउ्म' की लम्बी धुन से बनती है परन्तु वह ध्यान रहे कि यह कोई प्राकृतिक धुन नहीं है, केवल इस धुन के सहारे, हम उस तक पहुँच सकते हैं जो निरोल शक्ति (energy) ऊर्जा है जिससे सारे ब्रह्मण्डों की रचना हुई जैसे कि -

ओअंकारि ब्रहमा उतपति।
ओअंकारु कीआ जिनि चिति।
ओअंकारि सैल जुग भए। ओअंकारि बेद निरमए।
ओअंकारि सबदि उधरे। ओअंकारि गुरमुखि तरे।
ओनम अखर सुणहु बीचारु।
ओनम अखरु त्रिभवण सारु॥ पृष्ठ - 930

ओंकार से ही ब्रह्म शक्ति का अस्तित्व प्रकट हुआ, ओंकार से ही इस जड़ प्रकृति में चेतना का सुमेल हुआ, ओंकार से ही time & space काल और अन्तरिक्ष सैल तथा युगों की मर्यादाएं बान्धी गई। सारी उत्पति ओंकार से ही हुई। सो यह जो धुन (energy) है यह पूर्ण शक्तिशाली है, इस धुन ने ही सारी प्रकृति की सम्भाल की है। इसलिये इस धुन को ऐकंकार से अलग नहीं कहा जा सकता। सगुण पारब्रह्म सहित इस ओंकार को एक ही हस्ती मानते हैं। 1ओंकार (ऐकंकार+ओंकार) के रूप में गुरू नानक पातशाह ने इसे प्रकट किया, वह हर जगह परिपूर्ण है, यह ज्ञान पूरी तरह से जिसके हृदय में बस जाता है वह महान पुरुष हो जाता है। उसे सत जीवन की औषधि का पता चल जाता है, जिसे नाम औषधि कहते हैं। 'नाम' जब प्राप्त हो जाये तो हउमैं तथा माया की ज़हर (विष) जो अरबों सालों से इस रूह को चढ़ी होती है, वह उभ्र जाया करती है, वह गहरी नींद जो युगों-युगांतरों से चढ़ी हुई थी उसमें से इसकी नींद खुल जाती है, यह जाग जाता है। अब वह अति सियाना हो चुका है। उसे पता चल गया है कि यहाँ 'मैं' नाम की कोई चीज़ है ही नहीं, अहम का ज़हरीला विषय एक अन्धेरे की कल्पना में से पैदा हुआ तथा यह हंगता और ममता मिट गई फिर इसने अपने आपको परिपूर्ण देखा क्योंकि वह अपने आदि की ओर बढ़ा। पहले उसने अन्नमयी कोश का पर्दा हटाया फिर प्राणमयी कोश, शारीरिक शक्ति में से गुज़रता हुआ, संकल्प शक्ति में से निकला और मनोमयी बुद्धि के कोश में जा पहुँचा और फिर मायिक आनन्द में से निकलता हुआ, फिर इसकी अवस्था उनमनी हो गई। इसने अपने स्वरूप को प्रत्यक्ष देखा और ध्यान से देखने

पर पाया कि यहाँ तो आत्मा ही कण-कण में समाई हुई है। उस पारब्रह्म परमेश्वर का नाम आत्मा पड़ गया। जब आत्मा को और गहराई से देखा तो यह स्वंय ही पारब्रह्म परमेश्वर था। जिसे यह ज्ञान प्राप्त हो गया उसका निवास नाम मण्डल में हो गया, निश्चय पूर्वक अपने आपको आत्मा समझ कर, जान कर, विशालता में जाकर देखा कि आत्मा तो ब्रह्म ही है, वह तो स्वंय ही पारब्रह्म परमेश्वर है जिसका कोई अन्त नहीं पा सकता। इसीलिये बाणी में फ़रमान आता है -

इआ मंदर महि कौन बसाई।
ता का अंतु न कोऊ पाई।
ना इहु गिरही ना ओदासी।
ना इहु राज न भीख मंगासी।
ना इसु पिंडु न रकतू राती।
ना इहु ब्रहमनु ना इहु खाती॥ पृष्ठ -871

सो मैंने विचार किया था कि आदमी दुखी है, उसके दुखों का इलाज 'नाम' है। नाम के बारे में विस्तार से विचार की है नाम से सभी शक्तियाँ निहित हैं। इसलिये दुखों का प्रारम्भ नाम को भूलकर बेहोशी में आ जाने से हुआ करता है, दुखों का इलाज गुरू नानक पातशाह ने बताया कि -

आदि सचु जुगादि सचु।
है भी सचु नानक होसी भी सचु॥ पृष्ठ -1

के मण्डल में जाकर हुआ करता है। आम समझ में आ जाने वाले अक्षरों में लिखा जाता है कि सारे दु:ख हउमैं में से 'मैं' 'मेरी' में से पैदा होते हैं क्योंकि ऐसा फ़रमान आता है-

जब लगु जानै मुझ ते कछु होइ।
तब इस कउ सुखु नाही कोइ।
जब इह जानै मै किछु करता।
तब लगु गरभ जोनि महि फिरता।
जब धारै कोऊ बैरी मीतु।
तब लगु निहचलु नाही चीतु।
जब लगु मोह मगन संगि माइ।
तब लगु धरमराइ देइ सजाइ॥ पृष्ठ - 278

सो साध संगत जी! आप अमृत बेला में उठकर आए और देखा कि कैसी वर्षा हो रही है? कई प्रेमियों के कपड़े गीले हो गये हैं? यहाँ पहुँचे तो यहाँ नाम की वर्षा हो रही है। यहाँ रूह भीग गई और कपड़ों के भाग जाने का ध्यान ही न रहा। अब रूह भीग चुकी है, अब नाम के हिलारे महसूस हो रहे हैं इस समूह को सत्संग कहते हैं -

सतसंगति कैसी जाणीऐ।
जिथै एको नामु वखाणीऐ।
एको नामु हुकमु है
नानक सतिगुरि दीआ बुझाइ जीउ॥ पृष्ठ - 72

यह अवस्था सदीवी कैसे प्राप्त हो सकती है, इसके लिये साधना करनी पड़ती है, साधन के बगैर ज्ञान शिथिल हो जाता है, श्रेष्ठ साधन हरि कीर्तन, तत्व वेता साधु की संगत गुरू साहिब ने बताई है पर हम तो अभी पहली दूसरी में ही पढ़ते हैं, हमें पी. एच. डी., डी. लिट की समझ नहीं आती। यहाँ तक कि हमारी स्मृति में से यह भी निकल जाता है कि क्या बताया था? यदि आधे घन्टे बाद पूछा जाये कि पाँच मिनट बोलकर बताओ कि क्या सुना है, तो हैरान रह जाते हैं कि सभी कुछ भूल चुका होता है। कारण यह है कि इस चीज़ की जिज्ञासा अन्दर पैदा नहीं हुई। अभी हम शुभ कर्मों में से गुज़र रहे हैं।

जैसे हवा के वेग से निर्मल जल किनारों पर आकर और किनारों के ऊपर से निकलता है, इसे एक रस तथा प्रवाह में रखने के लिये फुरनों (विचारों) रूपी हवा को नियन्त्रण में करना पड़ता है। इसी तरह से साधन करने पड़ते हैं जो महापुरुष बता सकते हैं कि तू किस तरह से डांवाडोल अवस्था में से अडोल (स्थिर) अवस्था प्राप्त कर सकता है। इसका एक ही साधन उपासना है, जैसी जिसकी बुद्धि होती है, महापुरुष उसे परखते हैं और उसे उसी तरह का इलाज बताते हैं। वे मूर्ख विद्यार्थी है, जो दूसरों के बताये गये सूत्रों पर अमल करते हैं, उनकी सुरत वृति को उखाड़ते है। महापुरुष गुरू के ध्यान में इसे लाते हैं, किसी को गुरू के ध्यान में उपासना करनी बताते हैं, किसी को शबद का ध्यान बताते हैं और शबद धुन में मन को लगाते हैं। जब अन्दर मन टिक जाता है फिर उस जल में अपना मुँह देखा जाता है, उस पर जो पर्दा पड़ा हुआ है वह ज्ञान तथा विचार करने से दूर हो जाता है, सभी कुछ जहाँ समाप्त हो जाये और शेष कुछ भी न रहे उसके आगे आत्म स्वरूप हुआ करता है, जिसने अपने अन्दर आत्मा को देख लिया और जीव आत्मा की मज़बूरी को पहचान लिया, उन्हें यह ज्ञात हो जाता है कि आत्म वस्तु को ब्रह्म, परमेश्वर, अगम अगोचर, अनन्त अलख कहा जाता है। गुरू महाराज जी संकेत देते हुए फ़रमान करते हैं कि यह जो शरीर है, यह विषय विकारों को भोगने के लिये नहीं मिला है, इस शरीर ने धर्म की कमाई करके अपने लक्ष्य तक पहुँचना है। गुरू महाराज जी ने इस शरीर को कष्ट देने से वर्जित किया है और कहा है कि इसे सतोगुणी खुराक दो, सतोगुणी आचार, व्यवहार, विचार बनाओ। यही गुरू महाराज जी संकेत करते हैं, बताते हैं कि इसके अन्दर वह अमूल्य वस्तु पड़ी है, जिसका कोई मूल्य नहीं पा सकता, परन्तु गुरमुख की संगत करने से वह वस्तु धीरे-धीरे मिल जाया करती है, जैसे हम दृढ़ता पूर्वक किसी जमीन में

बोर करते रहें, बोर में पत्थर भी आते हैं, रूकावटें भी आती हैं पर जो दृढ़ पुरुष हैं, वे इन सभी पर काबू पाकर, बोर शुरू कर देता है फिर उसे निर्मल जल की प्राप्ति हो जाती है –

इहु सरीरु सभु धरमु है
जिसु अंदरि सचे की विचि जोति।
गुहज रतन विचि लुकि रहे कोई
गुरमुखि सेवकु कढै खोति॥ पृष्ठ – प–

जब उसे आत्मा की प्राप्ति हो गई तो उस समय गुरू महाराज जी फ़रमान करते हैं कि सर्वत्र रमा हुआ नाम अमृत इस शरीर में से दिखाई दे गया, फिर तया हुआ?

सभु आतम रामु पछाणिआ
तां इकु रविआ इको ओति पोति।
इकु देखिआ इकु मंनिआ इको
सुणिआ स्त्रवण सरोति। जन नानक नामु सलाहि
तू सचु सचे सेवा तेरी होति॥

पृष्ठ – 310

सो नाम की सम्भाल करने पर ज़ोर दिया गया है। मैंने प्रार्थना की थी कि यह ज्ञान यदि अपने पीछे आत्मा की लम्बी श्रृंखला नहीं देखता तो यह शिथिल होना शुरू कर देता है, मनुष्य पतित होना शुरू हो जाता है। हम वर्षा में, धुन्ध आदि में चलकर सत्संग में पहुँचते हैं, साध संगत जी! यह साधन है, हमें पता चलता है कि किस व्यापार के लिये हम आए हैं? उस समुच्चय व्यापार का नाम आत्मा है, इसकी जी भर कर साधना करो, सत्संग इसका store (भण्डारण) है, जहाँ बड़े-बड़े व्यापारी आकर अपनी वस्तुएं हमें दृष्टिगोचर कराते हैं। वाहिगुरू जी कृपा करें, हम साधन के मण्डल में पहुँच कर इन चीज़ों को प्रत्यक्ष नेत्रों से देख लें और अपना जीवन मनोरथ प्राप्त करके स्वंय भी इस संसार में से निर्मल मुख लेकर जायें तथा अन्य लोगों को भी कलंक रहित जाने के लिये प्रेरित करें।

बरसात रूक गई है, आप सभी ने अपने-अपने काम-काज पर, दुकानों पर, कार्यालयों में जाना है। गुरू महाराज कृपा करें तुम्हारा दिन प्रभु के ध्यान में व्यतीत हो।

है कोई साजनु सन्त जनु ?
नानक प्रभ मेलणहार ?

सन्त वरियाम सिंघ जी
बानी एवं संचालक वि. गु. रू. मिशन

जिस समय गनका ने महापुरुषों की ओर देखा तो उसकी दृष्टि भी बदल गई। जिस प्रकार महापुरुषों को पता चल गया था कि हम पाप के मन्दिर में आ गये हैं और गनका को भी सुगन्धि आ गई कि आज मेरे द्वार के सामने पुण्य आत्मा आ गई है, उनके दर्शन करते ही ऐसी चमक पैदा हुई कि अन्तसकरण शुद्ध होने लग पड़ा। पाप भागने शुरू हो गये और ज्ञान हो गया। अपने आप कहने लगी, ''ऐ मन! मैं ख्र वर्ष की हो गई, पापों में कितना समय बिता दिया, मैंने इतने पाप कर दिये कि उनकी गिनती करना भी कठिन है। आज परमेश्वर के प्यारे, मेरे द्वार पर कैसे आ गये ? हो सकता है कि मेरे भाग्य खुल गये हों और इन्होंने मुझे कोई उपदेश देना हो।'' उठकर उनके पास चली गई और जाकर चरणों में झुककर नमस्कार की। महात्मा कहने लगे, ''बीबा! यह पाप का मन्दिर बनाया है ?'' कहने लगी, ''महाराज! मैं कुछ बता नहीं सकती। इतना कहते ही रोने लग पड़ी और बोली मुझे सेवा का अवसर दें।'' महात्मा कहने लगे, ''कोई नहीं बीबा, रो मत।'' और अन्दर चले गये। उस महिला ने वस्त्र आदि सुखा दिये और कुछ खाने-पीने के लिए भी बना दिया और आपस में वार्तालाप हुआ। वेश्या ने रो-रो कर अपना हाल सुनाया कि, ''महाराज! मैं पापों में इतनी अधिक डूब चुकी हूँ कि मैं इनसे छूट नहीं सकती और न ही मन में मुझे कोई अच्छा विचार आता है क्योंकि मेरा चौगिर्दा इतना बुरा है। आपके दर्शन करके जो विचार मेरे मन में उत्पन्न हुआ, महाराज फिर यह मुझे प्राप्त नहीं होगा, मुझे इसी बात का भय है कि मैं पुन: फिर उसी पाप में प्रवृत न हो जाऊँ। महाराज, मेरे बुरे कर्मों के कारण, मुझे यह जीवन मिला है।'' महाराज कहने लगे, ''बीबा! तेरे केवल बुरे कर्म ही नहीं हैं कोई अच्छा कर्म भी है क्योंकि -

पूरब करम अंकुर जब प्रगटे भेटिओ
पुरखु रसिक बैरागी।
मिटिओ अंधेरु मिलत हरि नानक
जनम जनम की सोई जागी॥ पृष्ठ - 204

सभी शास्त्रों का मत है जब कोई ब्रह्मज्ञानी, वीतराग महात्मा मिल जाये, यह जीव के शुभ कर्मों का ही फल हुआ करता है।

गुरू महाराज दशमेश पिता जी से सिघों ने पूछा कि, ''महाराज! हमें कैसे पता चले कि आप प्रसन्न हैं ?'' महाराज कहने लगे, ''जब हम प्रसन्न होते हैं तो हम अपना गुरसिख उसे मिला देते हैं।'' कहने लगे, ''महाराज! यदि इससे भी अधिक प्रसन्न हों ?'' तो महाराज ने फरमाया, ''भाई! तब हम दो मिला देते हैं, उसका सत्संग करवा देते हैं।'' कहने लगे, ''महाराज! यदि आपकी प्रसन्नता इससे भी अधिक हो ?'' आपने फ़रमान किया कि, ''हम पाँच सिंघ भेज देते हैं, क्योंकि पाँचों के रूप में, मैं स्वंय हाज़िर हो जाता हूँ।'' सो इन्हें पुण्य कर्म कहते हैं क्योंकि पुण्य कर्मों के बगैर महापुरुषों के दर्शन नहीं हुआ करते -

धारना - मेला पूरिआं सन्तां दा होवे
सु जदों भाग जागदे।
मेरे पिआरे,
सुतो जदों भाग जागदे - 2, 2
मेला पूरिआं सन्तां दा होवे,.....।

पूर्ण सन्त का मिलाप जब हो जाता है तो पता चल जाता है कि मैं कौन हूँ ? चाहे सारी जिन्दगी पढ़ता रहे, तीर्थ यात्रा करता रहे, पर यह ज्ञान नहीं होता कि मैं कौन हूँ ? और यथार्थ ज्ञान की प्राप्ति नहीं हो सकती। महात्मा कहने लगे, ''बीबा! चिन्ता मत कर, कुसंगति का प्रभाव था, कुसंग का इलाज, परमेश्वर का नाम होता है, सत्संग हुआ करता है।'' कहने लगी, ''महाराज! मेरा किसी तरह से उद्धार कर दीजिए, क्योंकि मैं पाप में इतनी गहरी चली गई हूँ कि अब मैं बेबस हो गई हूँ, पापों में से निकलना बहुत कठिन लग रहा है।'' महापुरुषों ने उसके मन की अवस्था को समझते हुए यह भाँप लिया कि वह ठीक ही कह रही थी और उसे ऐसी युक्ति, ऐसा ढंग बताना चाहिए, जिससे इसका उद्धार भी हो जाये और इसे पता भी न चल सके। उनके पास जो तोता था, उसे इन्होंने सिखाया हुआ था और अमृत बेला से ही बैखरी बाणी में राम-राम बोलता रहता था और इस प्रकार परमेश्वर का नाम जपा करता था। सोचने लगे कि यह तोता इसे दे देते हैं ताकि वह इसके सहारे राम-राम कहा करेगी। अमृत बेला में उठ जाया करेगी क्योंकि और कोई तरीका इसके लिये इतना लाभकारी भी नहीं होगा, इसका अन्तसकरण पापों में प्रवृत होने के कारण बहुत मैला हो चुका है।

पाँचवे पातशाह जी से एक बार पेशावर की संगत ने पूछा कि, ''महाराज! हम वेद भी पढ़ते हैं, शास्त्र भी पढ़ते हैं, तीर्थ यात्रा

भी करते हैं। वेदों, शास्त्रों, स्मृतियों में जो कर्म लिखे हुए हैं, वे भी हम करते हैं। आप कृपा करके हमें निश्चयपूर्वक बताओ कि हमारी मुक्ति कैसे हो सकती है और यह भवसागर जो अथाह है जिसे दूतर (न पार किया जाने वाला) कहते हैं, इसे कैसे पार कर सकते हैं?'' महाराज कहने लगे, ''प्यारे! तरीका तो हम तुम्हें बता देते हैं, तुम ध्यान लगाकार सुनना।'' यह तरीका होता है कि बन्दगी करने वाले जो महापुरुष होते हैं, उनके जो तत्व वचन होते हैं, उन तत्व वचनों का निधिआसन करके पार उतारा हो जाता है –

धारना – भवजल तर जाईदै,
सन्तां दा बचन कमा के।
सन्तां दा बचन कमा के – ख, ख
भवजल तर जाईदै,......।

सन्तहु सागरु पारि उतरीऐ।
जे को बचनु कमावै
संतन का सो गुरपरसादी तरीऐ॥ पृष्ठ – 747

महाराज कहने लगे कि जो ब्रह्मनेष्टी, ब्रह्म-स्त्रोती और ब्रह्म वक्ता महापुरुष होते हैं, उनके वचनों का यदि कोई पालन कर ले, तो संसार सागर से पार हो जाता है। महात्मा सारे संसार को सांझा उपदेश दिया करते हैं। महात्मा की पदवी यह हुआ करती है कि उन्हें परमेश्वर के सिवाय संसार में और कोई दिखाई ही नहीं दिया करता, केवल वाहिगुरू ही दिखाई दिया करता है। यदि कह दिया जाये कि सन्त है नहीं। यह सवाल कुछ और है। जरनैल है, फौज़ में कर्नल है, यदि वह रिक्त पद न भरा, उसका तो कोई दोष नहीं, परमेश्वर तो बुरे से बुरे व्यक्ति को भी सन्त बना देता है। महात्मा बहुत ही साधना सम्पन्न हुआ करते हैं। कोई पाखंड या भेष कपट आदि नहीं दिखाया करते भेख जो है यह रूहानियत में सबसे बड़ी रूकावट है क्योंकि जब रस और ज्ञान न रहे, तब मनुष्य भेख का सहारा लेता है। भेख धारण करते ही द्वैत पैदा हो जाती है और द्वैत आने से आपस में धर्मों का, मजहबों का टकराव होता है क्योंकि भेख के स्तर पर उतर आए। जो आत्म ज्ञान के स्तर पर होते हैं, वे सभी इकट्ठे हो जाते हैं, उनके अन्दर कोई द्वैष नहीं रहता।

एक महात्मा टहल सिंघ थे और वह ऋषिकेश रहा करते थे। वह बहुत बन्दगी किया करते थे। एक बार उनके मन में विचार आया, महात्माओं के अति सूक्ष्म विचार होते हैं, उनके मन में विचार उठा कि यह गंगा जो पास ही बह रही है, सभी लोग इसका आदर करते हैं, इसके पानी को पवित्र मानते हैं। मैं इसमें से पानी लेकर शौचादि की क्रिया करता हूँ और हाथ पैर धोता हूँ, यह कोई अच्छी बात नहीं है और पानी किसी और जगह से लाया करेंगे इस गंगा का पानी काम में न लायें। इस प्रकार विचार कर ही रहे थे कि वह पानी काफी दूर है, दो मील दूर जाकर लाना पड़ेगा। इतना विचार करते ही बन्दगी में लीन हो गये, जब नेत्र खोले तो क्या देखते हैं कि कोई दो तीन गज़ की दूरी पर पानी, धरती में से फुव्वारे की तरह, वहाँ पर पानी का चश्मा फूट पड़ा। जब तक सन्त टहल सिंघ जी जीवित रहे, वह उसी चश्में का पानी ही प्रयोग करते रहे। जिस दिन उन्होंने शरीर त्याग किया, उसी दिन ही चश्मा भी बन्द हो गया।

बाबा अतर सिंघ जी रेरू साहिब वाले और इस तरह आठ अतर सिंघ जी और हुए हैं और सभी एक से बढ़कर एक थे। आप रामपुर गाँव में गोखे की छपरी में बन्दगी किया करते थे। भादों का महीना था, औड़ लगी हुई थी, रात को हलट चला करते थे। हलट का कुता टकटक की आवाज़ किया करता था। सरदार चैंचल सिंघ कुआँ चला रहे थे, बैलों को हाँक रहे थे। उसने देखा बाबा जी समाधि में बैठे हैं और हलट का कुता महापुरुषों की बन्दगी में विघ्न डाल रहा है, उसने कुतो को हटाकर पीछे फैंक दिया और टक-टक बन्द हो गई। महापुरुष जब समाधि से उथान हुए तो कहने लगे, ''भाई! हलट का कुता नहीं बोल रहा?'' वह बोला, ''महाराज! मैंने हटा दिया था।'' महाराज बोले, ''क्यों भाई?'' जवाब दिया कि, ''महाराज! आप नाम जप रहे थे।'' कहने लगे, ''हमें तो कुता कुछ नहीं कहता, हम टक-टक की आवाज़ नहीं सुनते, हम तो उसकी आवाज़ से वाहिगुरू-वाहिगुरू सुनते हैं –

हरहट भी तूँ तूँ करहि
बोलहि भली बाणि॥ पृष्ठ-1420

क्योंकि महापुरुषों की वृति ही ऐसी हुआ करती है, उन्हें सभी आवाज़ों में वाहिगुरू ही सुना करता है –

जो बोलत है म्रिग मीन पंखेरू
सु बिनु हरि जापत है नही होर॥ पृष्ठ – 1265

जानवरों की आवाज़ों में भी उन्हें परमेश्वर का नाम ही सुनता है क्योंकि सभी कुछ परमेश्वर का है, जिसकी भावना प्रबल हो जाए, उसे परमेश्वर का ही नाम सुनाई दिया करता है। कहने लगे, ''भाई! हमें तो कोई विक्षेपता नहीं थी, तूने बैलों के साथ धक्काशाही की, इन बेचारे बे-जुबानों के कन्धों की धूअ किस प्रकार निकालता था। कहने लगा, ''महाराज! मैं गाधी को बाजुओं तथा पट्ठों के बल पर रोक लिया करता था।'' कहने लगे, ''यह तो तुझे कष्ट हुआ, फिर हमारे भजन का क्या लाभ? हमारी भजन बन्दगी ने तो तुम दोनों को कष्ट दिया।'' कहने लगे हम हलट के कुतो को कह देते हैं कि, ''भाई! आज के बाद टक-टक मत करना।'' कुता लगा दिया और वह टक-टक की

आवाज़ भी बन्द हो गई। जब तक महापुरुष शरीर अवस्था में रहे, तब तक कुतो की टक-टक की आवाज़ न आई, जब शरीर त्याग दिया तो भी बहुत धीरे-धीरे बोलता था, फिर कभी ऊँची और तेज़ आवाज़ सुनाई न दी। ऐसी अवस्था महापुरुषों की हुआ करती है। उनके जो वचन होते हैं, वे परमेश्वर के वचन ही हुआ करते हैं, वे अपनी ओर से कुछ भी नहीं कहा करते। महाराज फरमाने लगे भाई-

करम धरम पाखंड जो
दीसहि तिन जमु जागाती लूटै।
निरबाण कीरतनु गावहु करते का
निमख सिमरत जितु छूटै।
संतहु सागरु पारि उतरीऐ।
जे को बचनु कमावै
संतन का सो गुरपरसादी तरीऐ।
कोटि तीरथ मन इसनाना
इसु कलि महि मैलु भरीजै।
साध संगि जो हरि गुण गावै
सो निरमलु करि लीजै॥ पृष्ठ - 747

चाहे करोड़ों तीर्थों पर स्नान कर लो पर फिर भी मन की मैल नहीं उतरती, बल्कि उससे भी अधिक मैला हो जायेगा और शरीर भी ठीक नहीं रहेगा क्योंकि सभी गंदे नाले, सीवरेज के नालों का पानी, तीर्थों में डाल दिया जाता है। तीर्थों के देवता बहुत दुखी हैं तथा परमेश्वर के पास पुकार कर रहे हैं कि, ''सच्चे पातशाह! यह कलयुग में कैसा व्यवहार हो रहा है? कलयुग ने सभी तीर्थों को अपवित्र कर दिया। पहले कलयुगी जीवों का तीर्थों पर स्नान करने से कुछ भला हो जाया करता था और अभी भी होता रहा है।'' महाराज कहने लगे कि, ''अब हमने सत्संग का ऐसा तीर्थ बना दिया है कि यदि कोई थोड़ी सी देर के लिये भी चित वृति को एकाग्र करके सुन ले तो उसके मन की मैल दूर हो जाती है -

बेद कतेब सिम्रिति सभि सासत
इन्ह पड़िआ मुकति न होई।
एकु अखरु जो गुरमुखि
जापै तिस की निरमल सोई।
खत्री ब्राहमण सूद वैस उपदेसु
चहु वरना कउ साझा।
गुरमुखि नामु जपै उधरै सो कलि महि
घटि घटि नानक माझा॥ पृष्ठ - 747

महाराज जी ने फ़रमान किया कि सही उपदेश परमेश्वर के नाम का होता है क्योंकि कलयुग में और कोई भी कार्य कर्म काम नहीं आता, केवल परमेश्वर के नाम की महिमा है। परमेश्वर का नाम सारे पापों को दबा कर ले जाता है। इस तरह से महात्मा, उस महिला को समझाने लगे, ''देख बेटा! क्या तू हमारे वचनों का पालन करेगी?'' कहने लगी, ''महाराज! आप कृपा कर दीजिए।'' महात्मा गनका से बोले, ''देख बेटा! चार प्रकार की कृपा हुआ करती है, पहली कृपा परमेश्वर की हुआ करती है कि उसने मनुष्य का शरीर दिया। दूसरी कृपा माँ-बाप की होती है कि वे पाल-पोस कर, शिक्षा देकर, पढ़ा-लिखा कर बड़ा कर देते हैं। तीसरी कृपा सन्तों, महापुरुषों तथा शास्त्रों की जिनके द्वारा इसके मन में ज्ञान के प्रति रुचि पैदा होती है। चौथी कृपा इसने अपने ऊपर स्वंय ही करनी होती है -

किरपा करे जे आपणी ता गुर का सबदु कमाहि।
नानकु कहै सुणहु जनहु इतु संजमि दुख जाहि॥
पृष्ठ - 466

अमृत बेला में उठकर स्नान करना, बन्दगी करना, महापुरुषों द्वारा बताए गये रास्ते पर पूरी तरह से चलना, रहत मर्यादा में रहते हुए अमर्यादाओं से दूर रहना तथा यह कृपा तुझे अपने आप पर ही करनी होगी।'' महात्मा ने फ़रमान किया, ''अमृत बेला में उठ जाया करना और यह तोता हम तुझे देकर जा रहे हैं, इसे हमनें सिखाया और गिझाइया (आदी बनाया) हुआ है कि यह अमृत बेला में दो बजे से राम-राम रटने लग जाता है। तू उठकर स्नान करके, पिंजरे के पास बैठ जाया करना और इसे एक बार कह दिया करना कि, ''बोल गंगा राम - 'राम-राम'।'' पहले यह राम-राम बोलेगा फिर इसके पीछे-पीछे तू बोलती रहना, इमला की तरह बोले जाना। शुरू-शुरू में ऐसे ही करना, फिर यह नाम बैखरी बाणी से बन्द होकर तेरे अन्दर मधमा में चला जायेगा। उस समय यह तोता बोलता ही रहेगा, तू सुनती जाया करना। उसके बाद तेरे श्वांस में राम आ जायेगा, आज्ञा चक्र में आ जायेगा त्रिकुटी में रम जायेगा, उस समय तू वृतिा में 'राम-राम' करते जाना, यह बाहर से राम-राम करता रहेगा और दिन निकलने तक इसी तरह से राम का भजन किये जाया करना -

राम नामु उपदेसु करि खेलि गइआ
दे वणजु सओता॥ भाई गुरदास जी, 10/21

महात्मा जी ने गनका को राम-नाम का उपदेश दे दिया। उसे कहा कि, ''बीबा! एक बात और ध्यान से सुन कि जो राम, मैं तुझे बता रहा हूँ वह इतना प्यार करता है, इतना दयालु कृपालु है, कि उसका नाम भी पतित पावन है। यह पापियों का उद्धार करने वाला नाम है। यह राम पापियों से नफरत नहीं करता बल्कि प्यार करता है, प्यार देता है और उसका कर्तव्य भी पापियों का उद्धार करना है, तू अपने मन में हीन भाव मत लाना कि मैं पापिन हूँ क्योंकि हीनपन का अहसास किसी के पास जाने के लिये बाधा

बन जाता है, यह विघ्न बन जाता है। जब गुरू के द्वार पर आ गये तो जो कुछ तुम कर चुके हो, उसे मन में दोबारा मत लाओ, उसने तुम्हें देखकर ही प्रवान किया है। ऐसा नहीं कहना चाहिए कि मैं पापी हूँ, मैं पापी हूँ। ठीक है जब पापी थे, तब थे, पर अब तो गुरू के बन गये हो। चाहे अच्छे हैं या बुरे हैं, तेरे ही हैं, यही प्रार्थना होती है क्योंकि गुरू का बिरद होता है –

जो सरणि आवै तिसु कंठि लावै
इहु बिरदु सुआमी संदा॥ पृष्ठ – 544

सो हीन भावना का अहसास मन में भूल कर भी मत लाना, ऐसा न हो कि तेरे नाम सिमरण, भजन का समय पिछले पापों को ही याद करने में बीत जाए। ठीक है। तेरा जीवन पापों से लथ-पथ भरा हुआ है, पर हम तुझे यह साबुन देकर चले हैं, यह तेरे पापों को साफ कर देगा। महात्मा ने परमेश्वर का नाम दे दिया और जपने की युक्ति भी बता दी और साथ ही यह भी कह दिया, ''बेटा! जब तुझे कभी फुर्सत मिले तो हमारा आश्रम नहर के किनारे ही है, वहाँ पर सत्संग में आ जाया करना और साथ ही महापुरुषों के वचन सुन लिया करना क्योंकि सत्संग एक किला हुआ करता है, इसके आन्तरिक शत्रु काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, ईर्ष्या, निन्दा, चुगली, वैर जब अपना वार चलाते हैं तो सत्संग का किला उनकी मार नहीं लगने देता, इसे रोक लिया करता है। सत्संग एक जगह इकट्ठे बैठकर (collectivly) संगति में, भजन करना हुआ करता है, इसलिये कभी-कभी सत्संग में आ जाया कर, तेरी वृति नाम की ओर लगी रहेगी।

गनका ने महात्मा के वचनों के अनुसार अमृत बेला में दो बजे उठना शुरू कर दिया और स्नान करके तोते के सामने बैठ जाती और फिर एक बार उसे कह देना, ''बोल गंगा राम! राम-राम!'' उसने पहले राम-राम कहना, इसने उसके पीछे-पीछे राम-राम बोलते जाना। ऐसे करते-करते, धीरे-धीरे उच्च अवस्था में पहुँचने लगी क्योंकि यह परमेश्वर के नाम में शक्ति है। यह नाम परमेश्वर के साथ जुड़ा होने के कारण उसका रूप है बल्कि यहाँ तक भी कह देते हैं कि नामी की अपेक्षा नाम उच्च है। यह जिस स्थान से आ रहा है, आत्म मण्डल में से वृति को उस तरह आकर्षित करना शुरू कर देता है। बैखरी से अपने आप ही अन्दर को चला जाता है। जिस स्थान पर नाम का निवास है, उस तरफ वृति को आकर्षित करता है। इसके अन्दर कई बातें सम्मिलित हैं, रस भी आता है, प्रकाश भी आता है और अनहद शबद भी आता है। किसी भी विधि से खींच ले, इसने अन्दर की ओर खींच लेना है। उसका रस इसके अन्दर पैदा होने से गनका का मन लगने लगा। अमृत बेला में खुशी-खुशी चाव के साथ उठ जाती थी। जिसे शौक है, आकर्षण है नाम जपने का, वे आराम से नहीं बैठा करते, अमृत बेला में जागते हैं –

सीने खिच्च जिन्हां ने खाधी
ओह कर अराम नहीं बहिंदे।
निहुं वाले नैणां की नींदर ओह दिने रात पए वहिंदे।
इको लगन लगी लई जांदी है टोर अनंत उनां दी
वसलों उरे मुकाम न कोई सो चाल पए नित रहिंदे॥

डा. भाई वीर सिंघ जी

जिन्होंने परमेश्वर को मिलना है, जिनके हृदय में वैराग है जिन्हें पता है कि पल-पल करके आयु बीतती जा रही है, उन्हें चिन्ता लगी रहती है कि जल्दी से जल्दी परमेश्वर का नाम जपें, वे हिम्मत करके प्रातः बेला में जागते हैं, ऐसा फ़रमान है –

धारना – अमृत वेले ओ कौण जागदे,
अमृत वेले ओ कौण जागदे।
कोई जागदे ने राम पिआरे – 2, 2.
भिन्नी रैनड़ीऐ चामकनि तारे।
जागहि संत जना मेरे राम पिआरे।
राम पिआरे सदा जागहि नामु सिमरहि अनदिनो।
चरण कमल धिआनु हिरदै
प्रभ बिसरु नाही इकु खिनो।
तजि मानु मोहु बिकारु मन का कलमला दुख जारे।
बिनवंति नानक सदा जागहि हरि दास संत पिआरे॥

पृष्ठ – 459

परमेश्वर के प्यारे, पहर रात रहते ही उठ जाते हैं स्नान करते हैं, वृति को एकाग्र करके, चौकड़ी लगाकर, एकान्त स्थान पर बैठ जाते हैं। सुरत को अन्दर की ओर खींचते हैं, वासना तथा फुरने (विचार) सभी कुछ बन्द कर देते हैं, कोई चीज़, कोई विचार नहीं आने देते, यह प्रभु का समय है क्योंकि बाकी ख्क घंटे सांसारिक कार्यों में ही बिताते हैं। कम से कम अढ़ाई तीन घंटे, दसवन्ध निकालना चाहिए। धन की अपेक्षा समय का दसवन्ध निकालना अधिक लाभकारी हुआ करता है। जिस समय मनुष्य माँ के पेट में था, तो इसने वायदे किये थे कि हे प्रभु! मुझे यहाँ से निकाल ले, मैं ख्ब घंटे तेरा नाम जपूँगा, तो आवाज़ आया करती थी कि ऐ जीव! ख्ब घंटे तो क्या तू तो एक मिनट भी नाम नहीं जपेगा क्योंकि मेरी माया बहुत प्रबल है। इसने सारे संसार को मोह लिया है, फिर तुझे याद भी नहीं रहेगा पर तुझे मेरे साधु, सन्त, गुरमुख प्यारे, याद करवायेंगे पर तू एक कान से सुनकर दूसरे में से निकाल दिया करेगा। जीव कहने लगा, ''नहीं महाराज! मैं तो ख्ब घंटे नाम जपूँगा।'' कहने लगे, ''ठीक है यदि तू ख्ब घंटे नाम जपेगा तो तेरा चाकर, तेरा गुलाम बनकर, तेरे सारे काम मैं किया करूँगा, तुझे कोई भी काम करने की

जरूरत नहीं पड़ेगी। पर तू वायदा करता है पर तेरे से पूरा नहीं सकेगा, तू गृहस्थ में रहना, परिवार के काम भी करना, पर अढ़ाई घंटे दसवन्ध के निकाल लिया करना, यह भी मैं तेरा प्रवान कर लिया करूँगा और ख्र घंटे मुजरे डाल दिया करूँगा। इतना वायदा करके फिर यह करवाते हैं कि –

माता के उदर महि प्रतिपाल करे
सो किउ मनहु विसारीऐ।
मनहु किउ विसारीऐ एवडु दाता
जि अगनि महि आहारु पहुचावए॥ पृष्ठ – 920

जो ऐसे विषम स्थानों पर भी तेरी रक्षा करता रहा है तू अब उसे भूल कर क्यों बैठ गया?

कबीर सूता किआ करहि उठि कि न जपहि मुरारि।
इक दिन सोवनु होइगो लांबे गोड पसारि॥
पृष्ठ – 1371

फिर तू जितना मर्जी सो लेना, फिर कोई नहीं जगायेगा प्यारे–

धारना – तैनूँ किसे ने जगाउणा नहीं
रज्ज के सौं लईं।

फिर तुझे किसी ने नहीं जगाना और न ही जब तुझे आवाज़ लगायेगें, तू जागेगा भी नहीं, पर अब तेरा जागने का मौका है, प्यारे जाग! भाई जाग! तुझे सतगुरू का हुम्म है –

गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए
सु भलके उठि हरिनामु धिआवै।
उदमु करे भलके परभाती
इसनानु करे अंम्रितसरि नावै।
उपदेसि गुरू हरि हरि जपु जापै
सभि किलविख पाप दोख लहि जावै।
फिरि चड़ै दिवसु गुरबाणी गावै
बहदिआ उठदिआ हरि नामु धिआवै।
जो सासि गिरासि धिआए मेरा हरि हरि
सो गुरसिखु गुरू मनि भावै।
जिस नो दइआलु होवै मेरा सुआमी
तिसु गुरसिख गुरू उपदेसु सुणावै।
जनु नानक धूड़ि मंगै तिसु गुरसिख की
जो आपि जपै अवरह नामु जपावै॥ पृष्ठ – 306

जो स्वंय भी नाम जपता है तथा औरों को भी नाम जपाता है उसे कितनी उच्च पदवी देते हैं महाराज? परन्तु किसी दुनियाँदार को इतनी उच्च पदवी नहीं देते, न ही मायाधारी को देते हैं क्योंकि मायाधारी के बारे में ऐसा फ़रमान है –

माइयाधारी अति अंना बोला।
सबदु न सुणई बहु रोल घचोला॥ पृष्ठ – 313

वह चर्म सीमा (Extreme) तक अन्धा होता है और चर्म सीमा तक ही बहरा होता है और इसके अन्दर जो निरन्तर शबद चल रहा है, इसे सुनाई नहीं देता, इसके अन्दर ख्र घंटे अनहद नाद बजता है, पर खेद है कि उस अनहद नाम को कोई भी नहीं सुनता। आवाज़ आ रही है –

दिला का मालकु करे हाकु॥ पृष्ठ – 897

नाद बजाकर आवाज़ें लगा रहा है और कहता है, ''प्यारे! आजा मेरे पास, पर कोई नहीं आता।'' परमात्मा की ओर से पीठ मोड़कर, मनमुख बना भागा फिरता है। यदि तुझे बहुत सुन्दर होने का गुमान है, उच्च वंश में जन्म लेने का अभिमान है, बहुत चतुर होने का अभिमान है तथा मंतकों तथा (चतुराइयों दलीलों) में किसी को भी आगे नहीं जाने देता, इसका घमण्ड है, पर सुन तो सही, महाराज जी तेरे बारे में क्या फ़रमान करते हैं –

धारना – म्रितक कहीऐ नानका – 2
जे प्रीत नहीं भगवंत – 2,2
अति सुन्दर कुलीन चतुर मुखि डिआनी धनवंत।
मिरतक कहीअहि नानका जिह प्रीति नही भगवंत॥
पृष्ठ – 253

यदि जिन्दगी की रौ में रूमक न आई, अन्दर प्यार न जागा और परमेश्वर को कभी प्यार के साथ आवाज़ें नहीं लगाई। वाहिगुरू-वाहिगुरू, राम-राम, अल्लाह-हू-अल्लाह नहीं किया तो भाई! तू मृत व्यक्ति है, बेशक तेरे अन्दर अति उच्च कोटि के सभी गुण क्यों न हो? हम चलते हैं, घूमते हैं, बड़े-बड़े कार्य करते हैं, महाराज कहते हैं तुम इससे भी आगे ऐसे काम करके भूत भी बने फिरते हो –

कबीर जा घर साध न सेवीअहि
हरि की सेवा नाहि।
ते घर मरहट सारखे भूत बसहि तिन माहि॥
पृष्ठ – 1374

जिस घर में साधु महात्मा के चरण नहीं पड़ते, घर में से जपुजी साहिब, बाणी की आवाज़ नहीं आती, रहरास नहीं पढ़ा जाता, वह घर, घर नहीं होता भाई! वे तो श्मशानों की तरह हुआ करते हैं और उनमें रहने वाले चलते फिरते मायाधारी भूत प्रेत ही हुआ करते हैं।

सो महात्मा कहने लगे, ''बीबा! परमेश्वर के नाम में ऐसी सता है कि इससे दुमर्ति नष्ट हो जाती है। इस तोते की मदद से जब तेरी वृति ऊँची हो जायेगी, तब तेरे अन्दर प्रकाश हो जायेगा और तेरी लिव लग जायेगी –

दुरमति देखि दइआल

होइ हथहुँ उस नो दितोनु तोता॥

भाई गुरदास जी, वार 10/21

महात्मा उसकी दुर्मति पर विचार करने के बाद, उसे दूर करने के लिये दयालु हो गये, उससे नफरत या घृणा नहीं की बल्कि सच्चाई के रास्ते पर ले आये ताकि उसका उद्धार हो जाये और उसकी दुर्मति नष्ट हो जाये तयोंकि वाहिगुरू जी के नाम में यह शक्ति है –

धारना – जप के नाम वाहिगुररू तेरा,
दुरमत दूर हो गई।
दुरमत दूर हो गई – ख़ ब
जप के नाम नाहिगुरू तेरा,.........।

राम नामु उपदेसु करि खेलि गइआ दे वणजु सओता।
लिव लागी तिसु तोतिअहु नित पढ़ाए करै असोता॥

भाई गुरदास जी वार 10/21

गनका की लिव लग गई और जिस दिन भी थोड़ी सी देर हो जाती तो मन में आता कि आज मैंने राम-राम नहीं जपा, मेरा समय बेकार चला गया। अब नाम अन्दर बस गया और सभी दिशाओं में राम-राम की गूँज सुनाई देती है, नाम का पहला कार्य यह होता है कि यह अन्तसकरण की मैल धो डालता है –

पतितु उधारणु राम नामु दुरमति पाप कलेवरु धोता॥

भाई गुरदास जी, वार 10/21

पापों से जो अन्तसकरण भरा पड़ा था, प्रभु के नाम से वह निर्मल हो गया, उदाहरण से यह बात समझ में आ जायेगी जैसे एक गन्दा कड़ाह हो और उसके अन्दर गन्दा पानी हो तो उसे नलके के नीचे रख दो और नलके को दिन रात चलने दो तो उसका गन्दा पानी बह-बह कर बाहर निकल जायेगा, एक दिन ऐसा आयेगा कि कड़ाह का जल बिल्कुल निर्मल हो जायेगा।

इसी प्रकार जो यदि वर्षा में कोई गन्दे पानी का भरा हुआ बर्तन पड़ा हो और मूसलाधार वर्षा हो रही है, मैला और गन्दा पानी सारा बह जायेगा और अन्दर साफ और निर्मल जल रह जायेगा। इसी प्रकार गन्दे और बुरे संस्कारों से अन्तसकरण भरा पड़ा है, जब नाम की धारा (रौ) लगातार इसमें बहनी शुरू हो जाती है, तो अन्तसकरण निर्मल हो जाया करता है। निर्मल हो जाने से लिव लग जाती है। सो नाम ने ऐसी अवस्था गनका की कर दी।

बन्दगी करते-करते, एकाग्र मन के अन्दर शक्ति भी आ जाया करती है। सो उनका अन्तिम समय आ गया तथा जिसे मौत कहते हैं और यह फल सभी को खाना पड़ता है, पर अन्तर यह होता है कि यह किसी को कड़वा लगता है और किसी को मीठा लगता है। जिन्होंने संसार में आकर जन्म पदार्थ को जीत लिया, वे खुशी-खुशी जाया करते हैं –

कबीर संत मूए किआ रोईऐ जो अपुने ग्रिहि जाइ।
रोवहु साकत बापुरे जु हाटै हाट बिकाइ॥

पृष्ठ – 1365

जिन्होंने संसार में आकर अपना जन्म, शराबों, कबाबों, बुरी चीज़ों में, जानवरों को दुखी करके, खाने-पीने में, ईर्ष्या वैर-विरोधों में बर्बाद कर दिया, उन्हें जितना उनका मन करता है रोयें, क्योंकि उन्होंने मनुष्य जन्म का आदर नहीं किया। अमोलक जन्म की सुरक्षा नहीं की और करोड़ों वर्षों के जन्म मरण के लम्बे चक्कर में फिर पड़ जायेंगे –

मनमुखि आवै मनमुखि जावै।
मनमुखि फिरि फिरि चोटा खावै।
जितने नरक से मनमुखि
भोगै गुरमुखि लेपु न मासा हे॥

पृष्ठ – क्स्त्रफ

जो इस सीढ़ी से चूक जाए, भाव सीढ़ी के आखिरी डण्डे पर पहुँच कर, नीचे आ गिरे, फिर आता-जाता रहता है जन्मता और मरता रहता है। दूसरी ओर जिसने अपना जन्म संवार लिया वह तो हंसता हुआ जाता है।

कबीर जा तू जनमिआ जगत महि जग हसे तूँ रोए।
ऐसी करनी कर चलो पिआरे तूँ हसें जग रोए।

मैं हसता हुआ अपने घर को जा रहा हूँ क्योंकि मैंने उस स्थिर अवस्था को प्राप्त कर लिया है, इसलिये मैं खुश हूँ –

अंतरि गुरु आराधणा जिहवा जपि गुर नाउ।
नेत्री सतिगुरु प्रेखणा स्रवणी सुनणा गुर नाउ॥
सतिगुर सेती रतिआ दरगह पाईऐ ठाउ॥ पृष्ठ – 517

जो सतगुरू को प्यार करता है उसे दरगाह में स्थान मिलता है-

धंनि धंनि कहै सभु कोइ।
मुख ऊजल हरि दरगह सोइ।
इहु वापारु विरला वापारै।
नानक ता कै सद बलिहारै॥ पृष्ठ – 283

हम उन पर सैकड़ों बार बलिहार जाते हैं, जिन्होंने यहाँ आकर जन्म पदार्थ जीत लिया और दरगाह में बड़ी शान के साथ जाते हैं –

रे रे दरगह कहै न कोऊ।
आउ बैठु आदरु सुभ देऊ॥ पृष्ठ – 252

जिन्होंने बहुत ल म्ब बा सफर तय करके अपने घर जाना है और उस प्यारे को, जिसे सारी जिन्दगी प्यार करता रहा है, उसके पास जाना है, वह रोयेगा नहीं, बल्कि वही रोयेगा, जिसने जन्म पदार्थ बर्बाद कर लिया और निकृष्ट यौनियों में पड़ेगा, निखिद्ध यौनि में कैसे पड़ता है? सारी जिन्दगी कारोबार में बिता दी,

बाज़ार बना लिए, दुकानें बना लीं, लोगों को बताता फिर रहा है, मेरा इतना बड़ा कारोबार है ? क्या करेगा इसका, ये कौन सा तेरे साथ जाएंगी ? सारी जिन्दगी मन इसी में लगाये रखा और अन्त समय कैसे वाहिगुरू कह देगा ? अन्तिम समय तो मन में वही आयेगा, अमुक से लेना है, अमुक को देना है और परिणाम क्या निकलेगा –

अंति कालि जो मंदर सिमरै ऐसी चिंता महि जे मरै।
प्रेत जोनि वलि वलि अउतरै॥ पृष्ठ – 526

रोना उन्हें चाहिये, जिन्होंने माया के चक्कर में पड़कर जन्म गवाँ लिया –

अंति कालि जो लछमी सिमरै ऐसी चिंता महि जे मरै।
सरप जोनि वलि वलि अउतरै॥ पृष्ठ – 526

जिसने साँप बनना है जाकर, उसे सही अर्थों में रोना चाहिये और उसके बाद में रह जाने वालों को भी रोना चाहिए कि हमारा प्यारा मरने के बाद साँप बनेगा। जिसने दरगाह में मान पाना है, इज्जत पानी है और पति के साथ घर जाना है, वह तो हसता ही जा रहा है –

मत मै पिछै कोई रोवसी सो मै मूलि न भाइआ।
मितु पैझै मितु बिगसै जिसु मित की पैज भावए।
तुसी वीचारि देखहु पुत भाई हरि सतिगुरू पैनावए॥
पृष्ठ –923

मित्र को मान–पत्र मिलते हैं तथा सरोपे दिये जाते हैं उसे तो रोना नहीं चाहिए, लेकिन संसार फिर भी रोता है पर वह हसता हुआ चला जाता है –

ऐसी करनी कर चलो पिआरे तू हसे जग रोइ॥

दुनियाँ तुझे याद कर कर के रोयेगी, पर तू हसता हुआ अपने घर को जायेगा। वह समय जो सभी पर आता है, वह समय आ गया। यह प्रार्थना इसलिये की है कि अभी भी समय है, अभी कुछ नहीं बिगड़ा, वाहिगुरू के घर में बख्शीश ही बख्शीश है। उसके घर में ऐसा नहीं है कि यदि तू इतनी साधना करेगा तभी तुझे बख्शीश मिलेगी। यह तो उनके लिये है जो अपने बल का जोर दिखाते हैं पर जो प्रार्थना करके कहते हैं कि, ''सच्चे पातशाह ! मेरे से कुछ नहीं होगा, तू कृपा कर, मैं लग तो गया और मैं तेरा द्वार खटखटाए जा रहा हूँ, तू कृपा करके द्वार खोल दे, मैं तेरे दर पर भिखारी बन कर आया हूँ।'' उस पर बख्शीश और कृपा हो जाती है। जिन पर कृपा हो जाये, उन्हें तो देर ही नहीं लगती, एक सैकिन्ड में ही पार लगा देता है। सो गनका का अन्त समय आ गया। भादों का महीना है, गनका से पिंजरे का दरवाज़ा खुला ही रह गया और काला नाग तोते को आकर खा गया और सुबह जब पिंजरे के सामने बैठकर कहने लगी, ''बोल गंगा राम ! राम राम !'' कोई आवाज़ न आई। वह उठकर खड़ी हो गई और पिंजरे पर हाथ मारा और साथ ही कहा कि, ''रात को चूरमा ज्यादा खा गया, बोलता नहीं। बोल गंगा राम, राम–राम !'' जब हाथ मारा तो साँप ने अँगूठे और उंगली के बीच वाली जगह (गाही) में डंक मारा जो अति नाजुक स्थान होता है और एक दम ज़हर चढ़ गया और धड़ाम से राम–राम कहती हुई नीचे गिर पड़ी। उस समय क्या हुआ ? उसे यमदूत लेने नहीं आए बल्कि –

अंतकालु जम जालु तोड़ि नरकै
विचि न खाधु सु गोता।
गई बैकुंठि बिबाणि चड़ि नाउ नराइणु छोति अछोता।
थाउँ निथाबै माणु मणोता॥
भाई गुरदास जी, वार 10/21

उस समय विमान आ गये और जय जयकार होने लग पड़ी और गुरू महाराज जी ने यह उदाहरण गुरू ग्रन्थ साहिब में दिया है –

जिह सिमरत गनका सी उधरी ताको जसु उरधारो॥
पृष्ठ – 632

जिसका सिमरण करने से, नाम जपने से, गनका जैसी पापिन का भी उद्धार हो गया, फिर प्रेमियो ! तुम उसका नाम क्यों नहीं जपते ? तेरे पास और कौन सा ज़ोर है फिर क्यों नाम नहीं जपता है –

अटल भइओ ध्रूअ जा कै
सिमरनि अरु निरभै पदु पाइआ।
दुख हरता इह बिधि को सुआमी तै
काहे बिसराइआ॥ पृष्ठ – 632

उसका नाम तू अपने हृदय में धारण कर ले जिसे याद करके ध्रुव जैसा बालक अटल पदवी को प्राप्त हो गया। ऐसे दुखों को दूर करने वाला जो प्रभु है, तू उसे क्यों भुला रहा है, तू भी उसे जप, तेरा भी उद्धार हो जाएगा, जैसे गनका का उद्धार हो गया और परमपद की प्राप्ति हो गई और उसके सारे पापों का नाश हो गया –

धारना – गनका चली ऐ बबानां उते बैठ के,
पापां दा पहाड़ ढहि गिआ।
मेरे पिआरे,
पापां दा पहाड़ ढहि गिआ – 2, 2
गनका चली ऐ बबानां उते,........।

ऐसा परमेश्वर का नाम है, जिसने भी जपा है उसका उद्धार हो गया –

साई नामु अमोलु कीम न कोई जाणदो।
जिना भागि मथाहि से नानक हरिरंगु माणदो॥

पृष्ठ – 81

बाबा जी कहने लगे, ''चन्दा सिंघ! हमने तुझे परमेश्वर के नाम की महिमा बताई है ताकि यह दृढ़ हो जाये कि नाम कोई छोटी-मोटी चीज़ नहीं है कि वाहिगुरू-वाहिगुरू बोले जाओ। वाहिगुरू कहने मात्र से कितना फल प्राप्त होता है कि बड़े-बड़े महापापी भी तर गये।

सो अब समय इजाजत नहीं देता, हम यहीं पर ही समाप्त करते हैं। अब सभी प्रेमी आनन्द साहिब तथा गुरू सतोतर में बोलकर अपनी रसना पवित्र करने की कृपालता करो।

किव सचिआरा होईऐ ?

सन्त वरियाम सिंघ जी
बानी एवं संचालक वि. गु. रू. मिशन

सो भाई तिलोका जी ने राजकुमारी को अब अन्तिम सन्देश देते हुए कहा कि, ''राजकुमारी जी! तुमने मेरी बहुत सेवा की है, मुझे बहुत अपनत्व दिया, प्यार दिया है। मैं गरीब हूँ, धन मेरे पास कुछ है ही नहीं। मैं तो पैदल सैकड़ों मील का सफर कर रहा था, पर राजा होते हुए भी आपने मेरी जान जंगल में घूमने फिरने वाले कुतें, कौओं आदि से बचाकर, अपने महलों में लाकर कितनी सेवा की है ? मैं इस धन्यवाद के बदले अपने गुरू के खजाने में से अति कीमती लालों से भी अधिक, बिना मूल्य लिए, ज्ञान देना चाहता हूँ। अब तुम उसे ध्यान से सुन लो क्योंकि इसके पश्चात मेरा और तुम्हारा शारीरिक मेल विच्छेद हो जायेगा। यदि तुम्हारे अन्दर वास्तव में ही मेरे साथ प्यार है और लगन है तो तुम रोना मत। यदि तू मेरे जाने के पश्चात रोने लग गई, तो सभी कुछ भूल जायेगी। मैं फिर बताता हूँ कि तू आत्मा है, शरीर नहीं है। मैं अब और अधिक विस्तार पूर्वक बताता हूँ कि आत्मा तथा ब्रह्म जिसकी शक्ति से सारा संसार रचा हुआ दिखाई देता है, वह भी आत्मा का दूसरा नाम है। ब्रह्म तथा सत ये भी एक ही हैं। इस सच को मेरे सतगुरू ने 1ओंकार एक 'ओउ्म' कहकर 'सत' कहा है, उसी ने ही सारी सृष्टि बनाई है, इसलिये वह कर्ता है, घट-घट में रमा हुआ है, तेरे अन्दर मेरे अन्दर, पर्वतों, दरियाओं, पवन, पानी जो कुछ भी है, सभी के अन्दर वह समाया है। सो उसे पुरख कहा है। उसे किसी का भय भी नहीं है, किसी के साथ उसका वैर भी नहीं है। वह सभी से प्यार करता है, वह प्रेम का रूप धारण करके ही संसार का पालन करता है और उसकी रक्षा करता है। इसे सुखी बनाने के लिए अपने प्यारों को भेजता है, वे इसे समझाते हैं। गलत रास्ते पर चल रहे राहियों को ठीक रास्ते पर चलाते हैं, यह ज्योति कभी भी समाप्त नहीं होती। सदीवी है, सब कुछ जानने वाली, सभी के दिलों में रहने वाली है, पर इसका रूप रेख कोई नहीं है। जैसे तेरे अन्दर गुस्सा आता है, माता-पिता का प्यार जागता है, उसका कोई रूप रंग नहीं होता, इसी प्रकार उस वाहिगुरू का भी कोई रूप रंग नहीं, पर सभी के अन्दर प्रतीत होता है। प्रकृति आनन्दित हो रही है, फूल सभी के मनों को तृप्ति दे रहे हैं, पंछियों के मीठे बोल मन को खुशी देते हैं। कुदरत का मनभावन वातावरण आवाज़ें लगा-लगा कर कहता है कि मैं तेरी तरह चिन्ताओं में ग्रस्त नहीं, मैं अपने स्वामी का प्रफुल्लित हुआ हस रहा हूँ। यदि कोई मुझे मार दे, तो मेरा उसके साथ कोई वैर विरोध नहीं है। मैं सभी को प्रसन्न होकर, प्रसन्न चित करने का यत्न करता हूँ। वह तमाम होश, सारा ज्ञान, उसी में से ही मनुष्य को, वनस्पति को, पशु पंछियों को प्राप्त होते हैं। वह सबसे महान है और बख्शीश की मूर्ति है। उसके भेजे हुए, उसका अपना ही रूप, महापुरुष सबसे महान हुआ करते हैं। अन्धकार में प्रकाश कर देते हैं, इसलिये उन्हें गुरू कहा जाता है और उनकी कृपा द्वारा ही इस जीव को ज्ञान होता है कि मैं तो उसका रूप हूँ, मैं आत्मा हूँ।

राजकुमारी! जैसा तूने कहा कि जब मैं शीशे के सामने खड़ी होती हूँ तो मैं उसे शरीर नहीं कहती, आत्मा कहती हूँ। यह बात उतनी ही गलत है, जितना अपने आपको शरीर समझना है। अब मैं तुझे उदाहरण देकर बताता हूँ, ''एक बादाम है, बता बादाम में कौन सी चीज़ श्रेष्ठ है जिसका बादाम से भी अधिक मूल्य है ?'' कहने लगी, ''यह तो मैं अच्छी तरह से जानती हूँ कि उसका मूल्य बादाम रोगन के कारण है। यदि खुश्की हो तो कोई खाता है ?'' भाई तिलोका जी कहने लगे कि, ''यदि बादाम रोगन प्राप्त करना हो, पौधा लगाया जाता है, उसकी देख भाल की जाती है, पानी आदि से सिंचाईं की जाती है, बिमारियों से बचाने के लिये अनेक प्रकार की दवाईयों का प्रयोग किया जाता है, फिर उस पर फूल लगते हैं, फूल से फल बनता है। बादामों के गुच्छे बन जाते हैं, जब पक जाते हैं तो उनका कठोर छिलका उतारा जाता है जो लाल सूक्ष्म छिलका है, वह भी उतार दिया जाता है, फिर उसमें से सफेद भाग सा निकल आता है। जिसे कुछ वैद्य कूट कर, मिश्री मिला कर एक आध काली मिर्च के साथ दवाई के रूप में, उस व्यक्ति को देते हैं, जिसके दिमाग में खुश्की हो गई हो। उसके बाद जो वस्तु उसके अन्दर है, वह है बादाम रोगन। उसे विशेष विधि द्वारा निकाल लिया जाता है। बर्तन भर लिये जाते हैं और फिर उसे साफ करके छोटी-छोटी शीशियों में भर दिया जाता है। हकीम लोग उसे और भी शुद्ध करते हैं और उसका सार निकाल लेते हैं। अब आप ही बताओ, यदि वृक्ष कहे कि मैं बादाम रोगन हूँ या कठोर छिलका कहे कि मैं बादाम रोगन हूँ या सफेद और लाल भाग वाला कहे कि मैं बादाम रोगन हूँ यह तो फिर वही भूल हुई न जैसे तुम शीशे के सामने खड़े होकर अपने आपको कह देती है, मैं आत्मा हूँ। ये सभी चीज़ें आत्मा नहीं हैं, इनमें आत्मा रमी हुई तो है आत्मा न्यारी नहीं है। भ्रम

में इस सभी को आत्मा कह देना भूल हुआ करती है। यह सारा आत्मा का ही पसारा है। पर इस दृष्टिमान की अति सूक्ष्म अंश, सता आत्मा है। जिस प्रकार बादाम है, उसके तुम दो भाग कर दो, दाल है उसके दो टुकड़े कर दो, यदि तुम उन दोनों हिस्सों को अलग अलग बोओगे, तो वह पौधा नहीं बनेगा। क्योंकि उनके अन्दर जो खाली स्थान है उसी में सभी कुछ है, वह हमें दिखाई नहीं दे रहा। यदि पूरा साबत दाना बोएगें तो उस खाली जगह में से पौधा निकलता है। इसी प्रकार इस शरीर में दिखाई देने वाले और न दिखाई देने वाले अंश हैं जिन्हें हम अच्छी तरह से नहीं जानते हैं। पहले तो यह शरीर जिसमें आकाश, हवा, अग्नि पानी और मिट्टी सुन्दर योजना अनुसार इकट्ठी होकर सुन्दर, असुन्दर दिखाई देती हैं फिर पाँच तत्वों तथा ख्र अंशों से उपजी आँखे, कान, नाक, जीभ, स्पर्श इन्द्रियाँ हैं। इनसे सूक्ष्म पाँच प्राण हैं, इन से सूक्ष्म मन है, जिसे तू जानती ही है। यह हर समय कुछ न कुछ चितवता रहता है। मन की आवारागर्दी को रोकने के लिये बुद्धि हुआ करती है, उसके बाद महसूस करने वाली खुशी गमी के अनुसार चलने वाला, चितवना करने वाला चिता होता है। राजकुमारी जी! फिर इसके आगे एक बहुत मज़बूत पर्दा होता है। वह तू जानती ही है, वह है अपने आप को सबसे अलग समझ कर अपना अस्तित्व मानना।'' कहने लगी, ''यहाँ तक तो मैंने अच्छी तरह से समझ लिया।'' भाई तिलोका जी कहने लगे, ''अब तू अपने आपको मैं समझने तक तो पहुँच गई। यह ऐसे ही है जैसे बादाम के सफेद भाग तक पहुँच गई। अब इसे रिड़कना है और तत्व रूप में बादाम रोगन निकालना है। तेरी समझ में कुछ आया?'' राजकुमारी कहने लगी, ''कुछ-कुछ आ गया, यह बताओ अब इसके आगे क्या है? गिरी में बादाम रोगन सार है, तत्व है। मेरे अन्दर कौन सा तत्व है?'' भाई तिलोका जी कहने लगे कि, ''राजकुमारी! जो तूने कहा है कि मेरे अन्दर कौन सा तत्व है, वह तेरे 'मैं' तथा 'मेरी' को पार करके आता है, वह है आत्मा। जो सभी जगह परिपूर्ण है। वाहिगुरू जी तथा आत्मा एक ही है। ऐसे समझ ले, परमेश्वर तेरे अन्दर असली तत्व है। जो सदा जीता जागता प्यार करने वाला तत्व है। अब आया तेरी समझ में? अब शीशे के सामने जाकर, खड़े होकर कहने की जरूरत नहीं, तू इस शरीर का तत्व है, तू आत्मा है, आत्मा एक ही है। ये सभी जीवों पशुओं, पन्छियों, घास, फूंस, पौधों, वृक्षों, शेरों, चीतों कुतों, साँपों तथा अन्य सभी दृष्टिमान वस्तुओं में एक ही आत्मा परिपूर्ण है। जिसके दर्शनों में तेरा अपना झूठा अस्तित्व रूकावट डाल रहा है। इसे मेरे सतगुरू जी हउमैं कहते हैं। जब हउमैं पर तेरी सता पड़ती है तो इस सता को जीव आत्मा कहते हैं। तू याद रखना कि मैंने तुझे क्या बताया है?'' तुरन्त बोल पड़ी, ''अब मुझे पता चल गया कि मेरे अन्दर बाहर, सभी के अन्दर, एक आत्मा सता काम कर रही है, वही मैं हूँ। जो रूप पाँच ज्ञानेन्द्रियों के बाद जो सता है, वह परिपूर्ण सता है उसे वाहिगुरू जी कहा जाता है, वही आत्मा है, वही तू है। पर अब ये सारी बातें तुझे याद नहीं रहेंगी, तुझे मैं एक ढंग बताता हूँ कि इस परम सता को मेरे सतगुरू जी ने वाहिगुरू कहा है। मेरे सतगुरू जी भी मुझे प्यार करते हैं और तुझे भी उतना ही प्यार करते हैं, जितना मुझे करते हैं। वे निरा ही प्यार का रूप हैं, संसारी लोग उन्हें गुरू नानक नाम से याद करते हैं। वे अनाम हैं, न उनका कोई रूप रंग है, वह न्यारे हैं, वे स्वंय ही परमेश्वर हैं। गुरू परमेश्वर है पर संसार में जीवों के उद्धार के लिए उन्होंने हमारे जैसा ही रूप धारण किया है, हमारी तरह ही प्यार करते हैं। प्यार में खिचे चले जाते हैं। उन्होंने हमारे जीवन के उद्धार के लिए जो रास्ता बताया है, वह बहुत ही आसान है। उनका फ़रमान है कि तुम वह हस्ती जो निरा ही प्यार है जिसका रूप रंग शरीर में लगे नेत्रों से नज़र नहीं आता। वह वाहिगुरू मन्त्र जप कर जो नेत्रों पर विकार पड़ा हुआ है, माया का मोतिया बिन्द चढ़ा हुआ है, वह मोतिया को दूर कर देता है। फिर दृष्टि खुल जाती है जो चीज़ें इन नेत्रों से नज़र नहीं आती, वे रूपमान होकर दिव्य दृष्टि से देखी जाती हैं। तू मेरे जाने के बाद इस मन्त्र का जाप करना, यह वैराग तेरे लिये उड़न खटोले का काम करेगा क्योंकि बिना वैराग के मन, तुझे माया के हिडोलों में से निकलने नहीं देगा -

बिनु बैराग न छूटसि माइआ॥ पृष्ठ -329

सो इस वाहिगुरू को मिलाने वाला शबद है जो मैंने तुझे बताया है, वह जीता जागता शबद है, इस शबद में साा (द्ढ्ढद्गह्लद्ब) है, यह आकर्षण पैदा करता है, उस आकर्षण से खिचे हुए, मेरे सतगुरू जी तेरे पास पहुँच जायेंगे। सो मैंने तुझे रास्ते पर डाल दिया है कि तू इस शबद बल के साथ मेरे पास पहुँच जायेगी, जहाँ पहुँच कर फिर कभी मौत नहीं आती, सदीवी जीवन प्राप्त हो जायेगा। पता चल जायेगा तुझे कि मैं तुझे कहा करता था कि तू आत्मा है तू देखेगी कि आत्मा के सिवाय और कुछ है ही नहीं -

ब्रहमु दीसै ब्रहमु सुणीऐ एकु एकु वखाणीऐ।
आतम पसारा करणहारा प्रभ बिना नही जाणीऐ॥

पृष्ठ - 846

इसलिए साधन आवश्यक है, वैराग जरूरी है, जो कुछ मुझ से सुना है, उस पर पूर्ण विश्वास रखना, पूरी तरह से मानना, जब तू इस प्रकार करेगी फिर तेरा रास्ता स्पष्ट होता चला जायेगा। जो शक्ति तेरे साथ छिपी हुई रहती है, वह मेरे सतगुरू की है, वह स्वंय ही तुझे रास्ता दिखायेगी। यह बातें करते हुए ही आपने दोनों हाथों से अपना मुँह ढक लिया, अंग शिथिल कर लिए और

लम्बी आवाज़ में कहा–

'वा.........हि.........गु.........रू'
'वा.........हि.........गु.........रू'
'वा.........हि.........गु.........रू'
'वा.........हि.........गु.........रू'
'वा.........हि.........गु.........रू'

पाँच बार बोलने के पश्चात यह आवाज़ खामोश हो गई। राजकुमारी घबरा गई और उसने एक दो आवाज़ें लगाईं। समझ गई कि जो कहा करते थे कि मैंने चले जाना है वह यही बात थी। उस समय उसने इतनी जोर से चीख मारी कि सारे महल में आवाज़ सुनी गई। आज उसके पिता जी भी महल में थे। वे अपनी लड़की के बारे में ही बातें कर रहे थे, उसके मानसिक प्रवाह के बारे में सोच रहे थे। जब उन्होंने आवाज़ सुनी तो राज वैद्य जी भी आ गये, माँ–बाप भी आ गये, राजकुमारी बेहोश हो चुकी थी और दाँत किटकिटाने, शरीर त्यागने के निकट थी। वैद्य जी ने ताकत की दवाई मुँह में डाली, मालिश की। उसे होश आई, उसने भाई तिलोका जी वाली चारपाई की ओर देखा, फिर बेहोश हो गई। इस प्रकार एक घंटे के संघर्ष के पश्चात, वैद्य जी द्वारा राजकुमारी को होश में लाया गया। उसके लिये सारा संसार बदल चुका था, वह एक दम चुप हो गई। वैद्य जी ने भाई तिलोका जी को देखा और कहा कि यह परदेसी तो शरीर छोड़ गया। राजकुमारी की बेहोशी का कारण भी यही था क्योंकि इसने डेढ़ महीने अपनी पूरी कोशिश की थी कि वह स्वस्थ हो जायें। इसकी सारी आशाओं पर पानी फिर गया। राजकुमारी को मानसिक सदमा लगा है, जिसके फलस्वरूप बेहोश हो गई। मैं इसे ताकत की दवाईयाँ दूँगा, तुम इसे पूरा प्यार देना, जो कुछ कहे, वैसा ही करना।

राजकुमारी माँ–बाप को अति प्यारी थी, अकेली–अकेली सन्तान थी, यही लड़की उनकी दुनियां थी। बड़ी से बड़ी वस्तु भी इस पर कुर्बान करने को तैयार थे, पर वे इसको हमेशा खुश देखना चाहते थे। भाई तिलोका जी का संस्कार बहुत ही आदर पूर्वक कर दिया गया। राजकुमारी जब स्वस्थ हो गई उस समय एक ही आवाज़ इसके हृदय से गूँजती थी, "वाहिगुरू, वाहिगुरू, वाहिगुरू, वाहिगुरू, वाहिगुरू और कोई अक्षर नहीं बोलती थी।" जब मूर्च्छा से जागती तो यह फूलों की माला लेकर वहाँ पहुँचती, जहाँ इसका प्यारा परदेसी, अन्तिम सफर पूरा करके अगम अगोचर में प्रवेश कर गया था। इस अवस्था को संसार में कोई नहीं समझ सका करता। यह विरह की अवस्था ऐसी ही है कोई विरही ही जान सकता है, किसी अन्य को तो इसकी गहराई का, पीड़ा का अनुमान भी नहीं हो सकता–

धारना – जिस तन लग्गीआं सोई तन जाणे,
किसे दी लग्गी कौण जाणदा।
मेरे प्यारे, किसे दी लग्गी कौण जाणदा–२, २
जिस तन लग्गीआं सोई तन जाणे........।

लागी होइ सो जानै पीर। राम भगति अनीआले तीर॥

पृष्ठ – 327

विरह एक अति निर्मल हृदय का अति सूक्ष्म गुण है। जिस तन में यह विरह उपजता है, वह तन जीता जागता है। जैसे कोई वृक्ष, पौधा पूर्ण रूप में फलता–फूलता है, बढ़ता है, आकर्षित करता है, इसी तरह से जिस तन में विरह पैदा होती है, वह जीता जागता तन होता है, बुझा हुआ नहीं होता। मृत हुए तन में विरह नहीं पैदा हुआ करती, वह आकर्षण हीन होता है, उसे माया और तृष्णा की अग्नि ने इतना जला दिया होता है कि उसमें प्रेम का एक अंश भी नहीं होता। वह केवल अपने लिए ही जीता है, शेष सभी के साथ उसका कोई लगाव नहीं होता। परमेश्वर को वह जानता ही नहीं है। गुरबाणी के अनुसार उसका हृदय श्मशान की धरती हुआ करता है। श्मशान में धरती जल जाया करती है। उसमें पौधों को उगाने की शक्ति खत्म हो जाती है, उस जली हुई धरती में कोई घास फूंस पौधे वगैरा हरे नहीं हुआ करते। बेअन्त वर्षा हो, उस पर पानी बरसे, सिलट (नमी) छोड़ जाये, फिर ऊपरी हिस्से में बीज अंकुर हो सकता है, पर नीचे से उसे खुराक न मिलने के कारण जली हुई धरती होने के कारण, वह अंकुरित नहीं होता, फलता फूलता नहीं है, सो इसे श्मशान कहा जाता है। जिस शरीर में विरह नहीं है वह शरीर किसी काम का नहीं होता। गुरू महाराज जी तो यहाँ तक फ़रमान करते हैं कि जिस पिन्जर में विरह न हो, वह शरीर अकारथ है उसे जला देना चाहिये–

जो सिरु सांई न निवै सो सिरु दीजै डारि।
नानक जिसु पिंजर महि बिरहा नही सो पिंजरु लै जारि॥

पृष्ठ –89

बाबा फरीद जी जंगल में घोर तप कर रहे थे, शरीर सूख गया। कौवों ने बहुत चोंचे मारी, मुर्दा समझ कर जब नेत्रों में चोंच मारने लगते हैं तो आप याचना करते हुए कौवे को कहते हैं, "जब तुम मेरे शरीर में चोंच मारते थे तो मैंने तुम्हें कुछ नहीं कहा क्योंकि मेरे अन्दर कहने के लिये कोई ताकत ही नहीं थी पर जब तुम मेरी आँखों पर भी चोंच मारने लगे तो मैंने यह याचना की, प्रार्थना की, कि जब मुझे खुदा–वन्द मिलेगा उस समय मुझे उसका दर्शन कैसे होगा? मैं प्रार्थना करता हूँ कि तुम मेरी आँखों को खराब मत करो, उन्होंने अपने शरीर की ओर देखते हुए कहा –

फरीदा तनु सुका पिंजरु थीआ तलीआं खूंडहि काग।

अजै सु रबु न बाहुड़िओ देखु बंदे के भाग॥

पृष्ठ – 1382

कागा करंग ढढोलिआ सगला खाइआ मासु।
ए दुइ नैना मति छुहउ पिर देखन की आस॥

पृष्ठ – 1382

मेरी दोनों आखों को चोंचे मत मारो ताकि मैं जी भर कर अपने प्यारे का दीदार कर सकूँ, विरह सदा ही मिलाप मांगता है, विरह के बिना रूहानियत की उच्च चोटियों पर नहीं चढ़ा जा सकता। जितना हृदय में प्यार अधिक होगा, उतना ही आकर्षण अन्दर प्रबल होगा, उसकी हालत निराली होगी –

सीने खिच्च जिन्हां ने खाधी ओह कर अराम नहीं बहिंदे।
निहुं वाले नैणां की नींदर ओह दिने रात पए वहिंदे।
इको लगन लगी लई जांदी है टोर अनंत उन्हां दी।
वसलों उरे मुकाम न कोई सो चाल पए नित रहिंदे॥

डा. भाई वीर सिंघ जी

विरह की अति विचित्र कहानियाँ हैं, भाई गुरदास ने सस्सी पुन्नी का उल्लेख करते हुए लिखा है –

ससी पुंनूँ दोसती हुइ जाति अजाती॥

भाई गुरदास जी, वार 27/1

इसके बारे में बहुत से कवियों ने भी लिखा है। हाशम कवि की लिखी 'सस्सी' बहुत प्रसिद्ध है। दशम ग्रन्थ में भी इसका उल्लेख मिलता है। यह कथा इस प्रकार है कि सस्सी कपिल मुनि की तथा रम्भा अपसरा की सन्तान थी। इसे सिन्ध दरिया में बहा दिया गया। सिन्ध के राजा ब्रह्म दत ने इसे नदी में से निकलवा कर इसका पालन पोषण किया। इसका नाम सामिया रखा गया। जब यह कुमारी हुई तो राजा ने पुन्नु पातशाह के पास दूत भेजे कि तू इसको वर ले। बड़ी शान शौकत के साथ विवाह हुआ। जब पुन्नु और सस्सी अपने मुल्क पहुँचे तो पुन्नु की पहली पत्नी को सौत के आने पर बहुत दुःख हुआ। उसने काफी जन्त्र मन्त्र किये ताकि पुन्नु सस्सी के आपसी सम्बन्ध में टूट जायें। आखिर पुन्नु को मरवा दिया। सस्सी उसके प्यार, विरह में डूबी हुई उसकी कब्र पर गिर कर मर गई।

आम प्रचलित किस्सों में कथा को किसी और ढंग से लिखा गया है। नदी के किनारे बसे भम्भौर शहर के वासी आदम के घर कोई औलाद नहीं थी। काफी मिन्नतें, मनौंतों के पश्चात एक खूबसूरत लड़की ने उसके घर जन्म लिया। ज्योतिषियों से पूछा तो उन्होंने कहा, ''इस लड़की ने युवा होकर मरूस्थलों में जाकर मरना है'' और कुल को दाग लगाने की भविष्य वाणी कर दी। राजा की सारी खुशी गमी में बदल गई। राजा ने वज़ीरों के साथ सलाह मशवरा करने के पश्चात, लड़की को एक सन्दूक में बन्द करके अनेक गहनों, वस्त्रों, धन दौलत आदि रख कर उसे नदी में बहा दिया। दैव नेत के अनुसार यह सन्दूक काफी दूर चला गया तो एक धोबी कपड़े धो रहा था। जब उसने सन्दूक आते देखा तो उसने तैर कर सन्दूक निकाल लिया और इसे उठाकर घर ले आया। धोबी का नाम अत्ता था। उसके घर कोई सन्तान नहीं थी। जब दोनों पति पत्नी ने सन्दूक खोला तो इस खूबसूरत लड़की के हुस्न को देखकर हैरान हो गया और साथ में इतना धन देखकर और भी हैरानी हुई। समझ गया कि यह किसी बड़े घराने की बेटी है और किसी शकुन-अपशकुन का विचार करते हुए इसे दरिया में बहा दिया है। धोबी धोबिन ने इसे बहुत ही प्यार से पाला पोसा। सस्सी इतनी सुन्दर निकली कि उसका यौवन सूरज को भी मात करता था। भम्भौर शहर में नुमायश लगी हुई थी, सस्सी भी वह नुमायश देखने चली गई। वहाँ एक खूबसूरत नवयुवक का चित्र लगा हुआ था। देखते ही उसे ऐसा महसूस हुआ कि उसका इसके साथ कोई जन्म जन्मातरों का सा सम्बन्ध लगता है। यह चित्र केचम शहर के बल्लौच शहजादे पुन्नु का था। पुन्नु को बिना देखे ही इसके हृदय में विरह का तीर लगा, इसने खाना पीना छोड़ दिया। पुन्नु के लिये सोच उसके अंग-अंग में समा गई, यह सोच उसे किसी प्रकार भी भुलाए नहीं भूलती। उसे पता चला कि यह चित्र केचम शहर के बल्लौच शहजादे पुन्नु का है। अचानक कुछ सौदागर केचम शहर से भम्भौर आ गये। सस्सी का उनके साथ मिलाप हो गया। उसने प्रार्थना की कि किसी तरह से पुन्नु को बता दिया जाये कि मैं उसे अत्याधिक प्यार करती हूँ। मैं उसके विरह में तड़प रही हूँ। पुन्नु ने सस्सी की बात सुनकर सस्सी से मिलने की तैयारी की। जब उसने भम्भौर आकर सस्सी को देखा तो उसी का ही होकर रह गया और विवाह करवा कर यहीं पर ही रहना शुरू कर दिया। राज पाट का सारा ध्यान भूल गया। इसके प्यार में मस्त हो गया। पुन्नु के भाईयों को जब पता चला तो वे पुन्नु को ढूँढते हुए, सस्सी के बागों में आ गये, आकर अपने भाई को मिले, परन्तु उसे रात्रि के भोजन में कुछ मिलाकर उसे बेहोश कर लिया और उसे साँडनी पर बिठाकर अपने देश ले गये। जब सस्सी की नींद खुली तो पता चला कि उसके भाई उसे उठा कर ले गये रास्ते में बहुत बड़ा मरूस्थल आया था, जहाँ अति की गर्मी थी। सस्सी उस मरूस्थल में नंगे पैर चल पड़ी। उसकी धोबिन माँ उसे चिल्ला-चिल्ला कर आवाज़ें लगा रही थी। पर उसका जवाब था –

तुरसां मूल न मुड़सां राहों, जान तली पर धरसां,
जब तक सास निरास न होवां, मरनों मूल न डरसां।

सस्सी पुन्नु-पुन्नु पुकारती हुई रेतीले मरूस्थलों में दौड़ती

चली गई। पानी के बिना उसके होंठ सूख चुके थे, फिर उसके होठों पर एक ही आवाज़ थी – पुन्नु-पुन्नु। नंगे पैर थी, मरूस्थल बहुत तपा हुआ था, वह बेहोश होकर गिर पड़ती थी, जब होश आती थी तो फिर आगे बढ़ती थी। अन्त में प्यास और गर्मी का संकट सहन न हो सका और गिर गई और इसी विरह वश उसके प्राण पंखेरू उड़ गये।

दूसरी ओर जब पुन्नु को होश आई और उसे पता चला कि वे मुझे सस्सी से विदा करके ले आये हैं, उसके अन्दर भी सस्सी का प्यार ठाँठे मार रहा था। वह भी उसी मरूस्थल की ओर भाग खड़ा हुआ और सस्सी तक पहुँच गया। उसने देखा कि सस्सी मेरे विरह में प्राण छोड़ चुकी है, उसने भी उसके मृत शरीर के पास अपने प्राण त्याग दिये और दोनों की वहाँ पर कब्रें बनीं। यह एक पति-पत्नी के प्यार की पवित्र कहानी है जिस में विरह इन्तहां है।

इसी तरह से श्री राम चन्द्र महाराज जी को सीता जी पूर्ण प्यार करती, प्यार में सदा लीन रहा करती थीं। उसकी हालत भी इसी तरह की थी जैसे एक मछली जल के बिना नहीं रह सकती, जब श्री राम चन्द्र जी को ૧૪ वर्ष का वनवास मिला तो उन्होंने महलों में रहना स्वीकार न किया क्योंकि राम ही उसका जीवन था, दु:ख सुख उसके लिये कोई भी महत्व नहीं रखता था। वह राम के चरणों में सुख महसूस करती थी। जब रावण छल कपट द्वारा उसे चुरा कर ले गया तो कुछ भी पता नहीं चल पा रहा था कि सीता जी को कौन उठाकर ले गया क्योंकि राम तथा लक्ष्मण को भी मायावी छल द्वारा अपने आसन से बाहर निकाल लिया था। जब वापिस आए तो देखा, कुटिया खाली थी। उस समय जो विरह, श्री राम चन्द्र जी के अन्दर उत्पन्न हुई, उसका उदाहरण नहीं मिलता। वह एक-एक पन्छी, एक-एक बेल बूटे, एक एक पौधे, एक-एक वृक्ष से पूछ रहे थे कि बताओ तो सही कि सीता जी का किसने हरण किया है। सीता जी अपने गहने फैंकती चली गईं। कुछ सूझ होती चली गई कि जिसने भी हरण किया है वह इसी रास्ते से गया है। वह रास्ता रावण के राज्य की ओर जाता था। श्री राम चन्द्र जी तथा लक्ष्मण जी सीता जी की तालाश में दूर-दूर तक गये। चैन्नई की ओर गये और वहाँ उनका परम भक्त हनुमान मिला जिसके बारे में गुरू महाराज जी ऐसा फ़रमान करते हैं कि-

रामु झुरै दल मेलवै अंतरि बलु अधिकार।
बंतर की सैना सेवीऐ मनि तनि जुझु अपारु।
सीता लै गइआ दहसिरो लछमणु मूओ सरापि।
नानक करता करणहारु करि वेखै थापि उथापि।
मन महि झूरै रामचंदु सीता लछमण जोगु।
हणवंतरु आराधिआ आइआ करि संजोगु।
भूला दैतु न समझई तिनि प्रभ कीए काम।
नानक वेपरवाहु सो किरतु न मिटई राम॥

पृष्ठ – 1412

श्री राम चन्द्र जी ने हनुमान जी को लंका में सीता जी की तालाश करने के लिये भेजा। जब हनुमान जी वापिस आए तो उस समय आप जी ने फरमाया –

औह हनुमान, कहिओ रघुबीर
कछु सुध है सीअ की छित माही।
है प्रभ, लंक कलंक बिना सु बसहि,
तर रावण बाग की छांही।
जीवत है ?
कहिबे ही को नाथ!
सो किउं न मरी हमरे बिछराही ?
प्रान बसे पद पंकज में,
जम आवत है पर पावत नाही।

यह विरह की जो दशा थी, इस उपर्युक्त लिखी गई वार्ता से पता चलता है कि श्री राम चन्द्र जी ने इस बात पर जोर दिया था कि सीता जी मेरे से बिछुड़ जाने के बाद, विरह की चोट लगने के बाद भी जीवित कैसे रही, मर क्यों न गई ? हनुमान जी जवाब देते हैं कि उसके प्राण आपके पवित्र चरणों में बसते हैं। इसलिये दूत प्राण लेने तो आए थे पर उसे मिल न सके। यह एक विरह की निशानी है क्योंकि विरह की चोट सहन करना हद से अधिक कठिन होता है।

बाबा फरीद विरह में तपते हुए, दिल में एक बहुत ही दर्दनाक मार्मिक आवाज़ सुनते हैं। आप एक आम के वृक्ष के नीचे बिराजमान थे। आपने नज़रें ज़रा सी ऊपर उठाईं तो एक छोटे से काले रंग के पन्छी की आवाज़ सुनकर आपके मुख से निकला, ''ऐ कोयल! मैं भी कभी बहुत सुन्दर एवं जवान था। मेरी जवानी तथा सुन्दरता की कभी लोग प्रशंसा किया करते थे, पर आज मैं अपने प्यारे के विरह में, अपना रंग भी खो बैठा हूँ, अपनी सुन्दरता खो बैठा हूँ और मेरा शरीर हड्डी की एक मुट्ठी बनकर काले रंग में बदल गया है। ऐ प्यारी कोयल! तेरी इस हूक में भी विरह की आवाज़ है, विरह का प्रत्यक्ष अस्तित्व है। क्या तू मुझे यह भेद बता सकती है कि तेरा रंग काला क्यों हो गया?'' उस समय कोयल बोली, ''बाबा फरीद! जैसे तू किसी की याद में जीता है, मैं भी अपने साथी की याद में जी रही हूँ। सभी पन्छियों के युगल हैं पर मेरे भाग्य में संसार की रचना करने वाले ने जोड़े (युगल) का मिलाप नहीं लिखा। परन्तु मैंने तुझे देखा है कि तेरे अन्दर भी मेरे जैसा ही विरह है, फराक है, प्यार है। सो प्यारे! मैं

भी अपने प्रीतम के विरह में जली हुई हूँ जैसा कि फ़रमान है –

काली कोइल तू कित गुन काली।
अपने प्रीतम के हउ बिरहै जाली॥ पृष्ठ – 794

डा. भाई वीर सिंघ जी इस विरह के बारे में बताते हैं –

साबण ला ला धोता कोला दुध दहीं विच पाइआ।
खुंभ चाड़ रंगण भी धरिआ रंग न एस वटाइआ।
विछड़ के कालख सी आई बिन मिलिआं नहीं लहिंदी
अंग अग्ग दे ला के देखो चड़दा रूप सवाइआ।

गुरू महाराज जी एक स्थान से गुजर रहे थे। वहाँ पर सुनहरी रंग के झिलमिल करते हुए कमल के फूल थे। निर्मल जल का भण्डार था, जिसमें ये लहलहा रहे थे। काफी समय के पश्चात जब गुरू महाराज जी फिर उसी जगह से निकले तो आपने क्या देखा कि कमल के फूलों का रंग काला हो गया और कीचड़ में गिर कर अपनी सुन्दरता गवाँ बैठे हैं। उस समय आपने पूछा कि, ''ऐ सुन्दर कमल! तेरी देही काली क्यों हो गई?'' उस कमल ने कहा कि, ''मेरे शरीर पर बहुत बड़ा कष्ट आ गया क्योंकि मैं अपने प्यारे से बिछुड़ गया हूँ, उसने मुझे जला दिया यदि मुझे मेरा प्यारा मिल जाये तो मैं पुन: लहलहा कर खुशियों का आनन्द लूट सकता हूँ।'' फ़रमान हैं –

पबर तूँ हरीआवला कवला कंचन वंनि।
कै दोखड़ै सड़िओहि काली होईआ देहुरी
नानक मै तनि भंगु।
जाणा पाणी ना लहां जै सेती मेरा संगु।
जितु डिठै तनु परफुड़ै चड़ै चवगणि वंनु॥

पृष्ठ – 1412

सो मिलाप और विरह में बहुत बड़ा अन्तर है। आक के पौधे पर लगी डोडियाँ (खखडियाँ) बहुत ही सुन्दर लगती हैं, पर जब आक से टूट जायें फिर वे फट जाया करती हैं, उनके अन्दर जो रूई से भी हल्की होती है वह आसमान में उड़ती रहती है और सैकड़ों हिस्सों में टूट कर दूर-दूर तक उड़ कर चली जाती है। सो इसके बारे में बाणी में इस प्रकार फ़रमान है –

खखड़ीआ सुहावीआ लगड़ीआ अक कंठि।
बिरह विछोड़ा धणी सिउ नानक सहसै गंठि॥

पृष्ठ – 319

जब तक आक के साथ जुड़ी रहती है, तब तक उनकी सजावट है और हरे रंग की जुड़ी हुई बहुत सुन्दर लगती है। जब फट जाती है, हजारों भागों में टूट कर बंट जाती है, सो इस तरह से विरह के बारे में सभी महापुरुष फ़रमान करते हुए वियोगी पुरुष की हालत बताते हैं। बाणी में इस प्रकार लिखा मिलता है –

कबीर बिरहु भुयंगमु मनि बसै मंतु न मानै कोइ।
राम बिओगी ना जीऐ जीऐ त बउरा होइ॥

पृष्ठ –1368

जिसके अन्दर वियोग का रोग लग जाता है उसका जीना मुश्किल हो जाया करता है। गुरू महाराज जी ने तो यहाँ तक फ़रमान किया है –

जिसु पिआरे सिउ नेहु तिसु आगै मरि चलीऐ।
ध्रिगु जीवणु संसारि ता कै पाछै जीवणा॥ पृष्ठ – 83

विछोड़े को एक बहुत बड़ा दु:ख माना गया है। गुरू महाराज जी ने चार बड़े दु:खों का फ़रमान करते हुए बताया है कि बिछौड़े का दु:ख सबसे महान है सो सहन नहीं हो पाता –

दुखु वेछोड़ा इकु दुखु भूख। इकु दुखु सकत वार जमदूत।
इकु दुखु रोगु लगै तनि धाइ। वैद न भोले दारू लाइ॥

पृष्ठ – 1256

अपने प्यारे के बिना विरह, धैर्य नहीं धर सकता, नेत्रों से जल स्वत: बहता रहता है, ठण्डी आहें निकलती रहती हैं, रंग जरद (पीला पड़) हो जाता है। खाना पीना कम हो जाता है, बातचीत बहुत कम हो जाती है, प्रतीक्षा में रहता है, हृदय में धीरज नहीं रख पाता। एक महापुरुष ने अपने मुरीदों को समझाते हुए कहा है –

आशकारा नव नीशानी ऐ पिसर,
आह सरदो, रंग ज़रदो चशमतर।
कमगुफतनो, कम खुरदनों, ख़ुआबश हराम,
इंतज़ारी, बेकरारी, दसतसर।

सच्चे प्रेमी को प्रीतम से बिछुड़कर जीना बहुत कठिन हो जाया करता है और जब तक अपने प्यारे को नहीं मिलता तब तक आन्तरिक विरह कभी भी धैर्य नहीं रख पाती सभी राग रंग, सांसारिक बन्धन भूल जाते हैं –

विछोड़ा सुणे डुखु विणु डिठे मरिओदि।
बाझु पिआरे आपणे बिरही ना धीरोदि॥ पृष्ठ – क्क

गुरू महाराज जी ने इस विरह का चित्र खींचते हुए फ़रमान किया है –

मेरा मनु लोचै गुर दरसन ताई।
बिलप करे चात्रिक की निआई।
त्रिखा न उतरै सांति न आवै
बिनु दरसन संत पिआरे जीउ।
हउ घोली जीउ घोलि घुमाई
गुर दरसन संत पिआरे जीउ॥ शबद हज़ारे

सो इस प्रकार राजकुमारी के हृदय में विरह वेदना जाग्रत हो उठी। अनेक यत्न किए गये। माँ-बाप ने उसका मन बहलाने के लिये, सैर सपाटे का कार्यक्रम बनाया, परन्तु उसके लिये दुनियाँ

में अपने प्यारे महापुरुष के अतिरिक्त और कुछ भी मन को लुभाने वाली वस्तु नहीं थी। उसके तो प्रत्येक श्वांस में उस प्यारे का आकर्षण घर कर गया था और अन्दर वाहिगुरू-वाहिगुरू की गूंज सदा ही गूंजती रहती थी।

विरायुक्त प्रेमी अपने प्यारे के बिना सारी सुध-बुध भूल जाते हैं, दुनियाँदारी के बारे में कोई होश-हवाश नहीं रहती, न ही उसके आगे कोई और कार्य क्रम ही होता है। उसके हृदय में से मिन्नतों की पुकारें निकलती हैं, हृदय से ठण्डी हूक (आहें) निकलती हैं और अन्दर से आवाज़ आती है -

हरि हरि सजणु मेरा प्रीतमु राइआ।
कोई आणि मिलावै मेरे प्राण जीवाइआ।
हउ रहि न सका बिनु देखे प्रीतमा
मै नीरु वहे वहि चलै जीउ॥ पृष्ठ - 94

नींद बिल्कुल खत्म हो जाती है, समय बीतने से ठहर जाया करता है और यह जीवात्मा कुरलाती है, मन में अपने प्यारे के दर्शनों के लिये आकर्षण बहुत अधिक बढ़ जाता है। छोटे-छोटे पन्छियों के उदाहरण देते हुए गुरू महाराज जी फ़रमान करते हैं -

माई मोरो प्रीतमु रामु बतावहु री माई।
हउ हरि बिनु खिनु पलु रहि न सकउ
जैसे करहलु बेलि रीझाई।
हमरा मनु बैराग बिरकतु भइओ
हरि दरसन मीत कै ताई।
जैसे अलि कमला बिनु रहि न सकै
तैसे मोहि हरि बिनु रहनु न जाई।
राखु सरणि जगदीसुर पिआरे
मोहि सरधा पूरि हरि गुसाई।
जन नानक कै मनि अनदु होत है
हरि दरसनु निमख दिखाई॥ पृष्ठ - 370

उसे सारा संसार सूना प्रतीत होता है। संसार का कोई राग, रंग, कोई सुन्दरता, उसे मोहित नहीं कर सकती क्योंकि जब तक वह अपने प्यारे से मिलाप नहीं कर लेता तब तक उसे चैन नहीं आती जैसा कि फ़रमान है -

सुणि नाह प्रभू जीउ एकलड़ी बन माहे।
किउ धीरैगी नाह बिना प्रभ वेपरवाहे।
धन नाह बाझहु रहि न साकै बिखम रैणि घणेरीआ।
नह नीद आवै प्रेमु भावै सुणि बेनंती मेरीआ।
बाझहु पिआरे कोइ न सारे एकलड़ी कुरलाए।
नानक सा धन मिलै मिलाई बिनु प्रीतम दुखु पाए॥
पृष्ठ - 243

सारा संसार पूर्णिमा के चन्द्र को शीतल कहता है, पर प्रीतम बिछौड़े की अग्नि के सामने, अग्नि की लपटों के समान है। इस विरह पीड़ा की अग्नि शरीर में अनगिनत चिन्गारियाँ छोड़ रही हैं। विरह पीड़ा की ठण्डी हूक, मानो फनियर नाग की फुंकारे हैं। यह विरह की आग इतनी प्रबल है कि इस अग्नि का स्पर्श पाते ही पत्थर भी फट कर टुकड़े-टुकड़े हो जाते हैं और जितना अधिक रोकने की कोशिश करो, छाती दो टूक हो रही होती है। प्यारे प्रीतम के बिछुड़ने के बाद जीना मरना बोझल हो गया है। प्रेम प्रतिज्ञा पालन करने में मानों कोई भारी भूल हो गई है जिसके फल स्वरूप मनुष्य जन्म को दाग लग रहा है, भाव जन्म व्यर्थ जा रहा है -

पूरनि सरद ससि सकल संसार कहै,
मेरे जाने बर बैसंतर की ऊक है।
अगन अगन तन मधि चिनगारी छाडै,
बिरह उसास मानो ढंनग की फूक है।
परसत पावक पखान फूटि टूट जात,
छाती अति बरजन होइ दोइ टूक है।
पीय के सिधारे भारी जीवन मरन भए,
जनम लजायो प्रेम नेम चित चूक है॥ 573

प्रीतम प्यारे के बिना, सुख देने वाली चीज़ें, बहुत ही सुन्दर बनीं कोठियाँ, घर तथा अनेकों रूप रंग आकर्षित नहीं करते, बल्कि डराते हैं, यमदूतों जैसे लगते हैं। अपने प्यारे के बिना राग तथा उनकी धुनें, बाजे कथा कहानियाँ शरीर को ऐसे चुभती हैं जैसे तीखे और असह्य तीर हृदय को बीन्धते हैं। प्यारे प्रीतम के बिना, भोजन वस्त्र तथा भान्ति-भान्ति के सुख, भयानक विष तथा आग के समान हैं। जैसे पानी में विचरण करती हुई मछली के लिए, प्यारे पानी के बिना, जीने का और कोई मनोरथ नहीं, इसी प्रकार मेरे लिए प्यारे प्रीतम के बिना अन्य कोई जीवन प्रयोजन नहीं है -

बिनु प्रिय सिहजा भवन आन रूप रंग,
देखीऐ सकल जमदूत भै भयान है।
बिनु प्रिय राग नाद बाद गिआन आन कथा,
लागै तन तीछन दुसह उर बान है।
बिनु प्रिय असन बसन अंग अंग सुख,
बिखिआ बिखमु अउ बैसंतर समान है।
बिनु प्रिय मानो मीन सलिल अंतरगति,
जीवन जतन बिनु प्रीतम न आन है॥ 584

संसार माया की कठोर जन्जीरों से जकड़ा पड़ा है। इसमें से किसी भी ढंग से नहीं निकला जा सकता, पर इसके बन्धनों को काटने वाला जो कुल्हाड़ा है, वह वैराग है, जब तक मनुष्य के

मन में वैराग पैदा नहीं होता, उसका मन माया में लीन रहता है। माया के भोग उसे आकर्षित करते हैं, माया के सम्बन्ध के कारण उसे एक झूठी आशा में बान्धे रखते हैं पर अन्त में जीव संसार से रोता हुआ खाली हाथ चला जाता है, कोई भी इसके साथ नहीं जाता। फिर यह पछताता है कि मैंने अपना सारा जन्म बर्बाद कर लिया। प्रभु को मिलने के लिये मैंने मनुष्य जन्म धारण किया था। त्त्ब लाख यौनियों के चक्कर, जब से यह संसार रचा है, तभी से खा रहा था परन्तु यह माया के मोह में फंसा अपना जन्म व्यर्थ गवां रहा है –

कबीर इहु तनु जाइगा सकहु त लेहु बहोरि।
नांगे पावहु ते गए जिन के लाख करोरि॥ पृष्ठ –1365

कबीर! यह इस माया ने मित्रता तो क्या करनी थी इसने अनेक कष्टों में मुझे डाल दिया। उसके अनेक फल मुझे चिपक गये और फिर मानस पदवी से गिरकर यौनियों में पड़ गया। फिर पता नहीं कब ऐसा समय मिलेगा? उस समय कैसे हालात होंगे? कोई साधु, महात्मा मिलेगा या नहीं? किसी तत्व वेता महापुरुष की संगत प्राप्त होगी या नहीं? तत्व ज्ञान प्राप्त होगा या नहीं? अनेक प्रकार के संशय जीव के मन में उठते हैं और माया में बन्धा हुआ जो कर्म करता है, वे सभी इसे भोगने पड़ते हैं। उन्हीं कर्मों के कारण इसे अनेक यौनियों में भटकना पड़ता है। गुरू महाराज जी ने तो यहाँ तक फरमाया है कि यह जो माया जीव को बान्ध रही है, वह अपना अति सुन्दर रूप दिखाती है, आकर्षण पैदा करती है, कहीं सुन्दर बाग बगीचे, सुन्दर वाहनों की ओर आकर्षित करती है, कहीं यह राजसी शक्तियाँ दिखाकर ऊँची पदवियों के नशे में गर्वीला करती है। इसके अनेक रूप हैं, अनेक कौतुक हैं, इसका काम ही यही है कि वास्तविकता को, यथार्थ को असत्य दिखाती है, वास्तविक चीज़ की ओर जीव का ध्यान ही न जाये। गुरू महाराज जी फ़रमान करते हैं–

इन्हि माइआ जगदीस गुसाई तुम्हरे चरन बिसारे।
किंचत प्रीति न उपजै जन कउ जन कहा करहि बेचारे॥
पृष्ठ – 857

गुरू महाराज जी इस जीव को सावधान करते हुए फ़रमान करते हैं कि ऐ जीव! आया तो तू परमेश्वर से मिलकर, अपने दुखों का अन्त करने के लिए तथा सत्य ज्ञान प्राप्त करके, सदा के लिए अज्ञान का अन्धेरा दूर करने के लिये था, परन्तु तू परमेश्वर की तरफ पीठ करके, उन नीच कर्मों में प्रवृत हो गया, जिन्हें पाप कहा जाता है। वह तूने पापों का कूड़ा-कर्कट इतना अधिक इकट्ठा कर लिया कि उसकी पर्तों की पर्तें अन्तसकरण में जम गईं, जिस दर्पण के द्वारा इसने अपने असली स्वरूप आत्मा के दर्शन करने थे, वहाँ इतनी मैल चढ़ गई, कीचड़ इतनी अधिक हो गई, वहाँ उसे हाथों से निकालना भी कठिन हो गया। यह शरीर इतना नीचा तालाब है, इसमें हवा के वेग से घास फूंस, मिट्टी, कंकड़ उड़ कर गिर रहे हैं तो प्रत्येक क्षण, अन्दर छिपे हुए तत्व रूप में आत्मा पर, मैल रूप में चढ़ते जाते हैं। माया ने तेरा स्वभाव ऐसा बना दिया है कि तू कभी ध्यान ही नहीं देता कि मैं इस कूड़े-कबाड़े को साथ-साथ बाहर निकालता जाऊँ, पर जब तुझे समझ आती है, तब तक यह इतना अधिक इकट्ठा हो जाता है कि हाथों से निकालना कठिन हो जाता है। महाराज जी कहते हैं कि यदि तूने यह गन्दगी अपने अन्दर से निकालकर अन्तसकरण को साफ कर लिया होता तो तू प्रभु प्राप्ति के निकट पहुँच जाता। परन्तु अब तूने अपने अन्दर इतना कूड़ा-कर्कट भर लिया कि इसे एक जन्म में साफ करना कठिन है। अन्धेरे में यह इतने नीच कर्म करता है, जिनकी गिनती भी नहीं की जा सकती। इसकी आदतें पक्की हो जाती हैं और इसे परमेश्वर के साथ मन लगाना कठिन हो जाता है। सहम, डर, दु:ख, बिगड़े हुए कर्मों की सजा, पता नहीं इसे कितने जन्मों तक दु:ख देगी। बाणी में फ़रमान आता है –

नानक इहु तनु जालि जिनि जलिऐ नामु विसारिआ।
पउदी जाइ परालि पिछै हथु न अंबड़ै तितु निवंधै तालि।
नानक मन के कंम फिटिआ गणत न आवही।
किती लहा सहंम जा बखसे ता धका नही॥
पृष्ठ – 789

महराज जी इस माया के बारे में बताते हैं कि –

माइआ होई नागनी जगति रही लपटाइ।
इस की सेवा जो करे तिसही कउ फिरि खाइ॥
पृष्ठ – 510

यह माया किसी भी ढंग से मनुष्य का पीछा नहीं छोड़ती। गुरबाणी में बताया गया है, इसके बारे में फ़रमान है कि मेरा मन न तो योग में लगा है, न ध्यान में लगा है मेरा चित माया के अधीन होने के कारण कैसे छुटकारा पायेगा क्योंकि मेरे अन्दर वैराग पैदा नहीं हुआ, वैराग के बिना माया से छुटकारा नहीं मिल सकता। फ़रमान है –

ना मै जोग धिआन चितु लाइआ।
बिनु बैराग न छूटसि माइआ॥ पृष्ठ – 329

वैराग पैदा करने वाली केवल एक ही शक्तिशाली मानसिक अवस्था है, जिसमें विरह के भाव पूरी तरह से रचे हों।

भाई तिलोका जी ने शरीर त्याग दिया। राजकुमारी को काफी सारे वचन बताये गये, जिनकी साधना करके वह सचखण्ड में प्रवेश कर सकती है, जहाँ पर पहुँच कर अपने स्वरूप का पूर्ण ज्ञान होकर, पूर्ण मेल हो जाता है। उस स्थान पर दूसरा कोई है

नहीं, स्वंय ही है जिसके बारे में फ़रमान है-

बेगमपुरा सहर को नाउ।
दूखु अंदोहु नही तिहि ठाउ।
नां तसवीस खिराजु न मालु।
खउफु न खता न तरसु जवालु।
अब मोहि खूब वतन गह पाई।
ऊहां खैरि सदा मेरे भाई।
काइम दाइमु सदा पातिसाही।
दोम न सेम एक सो आही।
आबादानु सदा मसहूर। ऊहां गनी बसहि मामूर।
तिउ तिउ सैल करहि जिउ भावै।
मरहम महल न को अटकावै।
कहि रविदास खलास चमारा।
जो हम सहरी सु मीतु हमारा॥ पृष्ठ - 345